श्री महावीर जैन विद्यालय

धार्मिक अभ्यासक्रम

जीवन उत्थान

श्रेणी - २

संकलन - संपादन

प.पू. आचार्यदेव श्रीमद्
विजय हेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्य
प.पू. गणिवर्य श्री कल्याणबोधिविजयजी म.सा.

प्रकाशक

श्री महावीर जैन विद्यालय
ऑगस्ट क्रांति मार्ग, मुंबई-४०० ०३६

श्री महावीर जैन विद्यालय

धार्मिक अभ्यासक्रम

जीवन उत्थान

श्रेणी-२

(अनुवाद)

❖ संकलन-संपादन ❖

प. पू. आचार्यदेव श्रीमद्
विजय हेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्य
प.पू. गणिवर्यश्री कल्याणबोधि विजयजी म.सा.

❖ अनुवादिका ❖

श्रीमती निरंजना शाह
(सुप्रीन्टेन्डेन्ट)
श्री महावीर जैन विद्यालय,
कन्या छात्रालय, अहमदाबाद.

❖ प्रकाशक ❖

श्री महावीर जैन विद्यालय
ऑगस्ट क्रांति मार्ग, मुंबई-४०० ०३६.

Jeevan Utthan - Shreni 2

Published : **SHRI MAHAVIRA JAINA VIDYALAYA** Mumbai-400 036.

प्रकाशक : **श्री महावीर जैन विद्यालय**
ऑगस्ट क्रांति मार्ग, मुंबई-४०० ०३६

प्रथम आवृत्ति : **संवत २०५९, ई.स. २००३**

नकल : **१०००**

श्री महावीर जैन विद्यालय — शाखाए विद्यार्थीगृह

श्री वाडीलाल साराभाई विद्यार्थीगृह
ऑगस्ट क्रांति मार्ग, मुंबई-400 036.
Phone : 23887891, 23864417
Fax : 23851649

श्री भोलाभाई जेसिंगभाई विद्यार्थीगृह
पालडी बस स्टेन्ड के सामने,
अहमदाबाद-380 006.
Phone : (079) 6579956
(079) 6584352

श्री लहेरचंद उत्तमचंद विद्यार्थीगृह
आर. वी. देसाई रोड, प्रतापनगर,
वडोदरा-390 004.
Phone : (0265) 2432 468

श्री भारत जैन विद्यालय
आगरकर रोड, पूणे-411004.
Phone : (9520) 2565 1226

श्री लहेरचंद उत्तमचंद विद्यार्थीगृह
पंचायत कार्यालय के पास,
वल्लभविद्यानगर-388 120.
Phone : (02692) 230211

श्री मणिलाल दुर्लभजी विद्यार्थीगृह
हिलड्राइव, तलाजा रोड,
भावनगर-364 002.
Phone : (0278) 2593969, 2570221

आचार्यश्री विजय वल्लभसूरीश्वरजी
जन्म शताब्दी विद्यार्थीगृह
जुहुलेन, बरफीवाला मार्ग,
महावीर चौक, अंधेरी(वेस्ट)
मुंबई-400 058.
Phone : 26210374/26718641

श्रीमती शारदाबेन उत्तमलाल महेता
कन्या छात्रालय, 'श्री निकेतन',
दशापोरवाड सोसायटी,
आयंबिल भवन के पास,
पालडी, अहमदाबाद-380 007.
Phone : (079) 2658 2956
(079) 2658 7627

डॉ. यावंतराज पूनमचंदजी जैन
श्रीमती संपूर्णा जैन विद्यार्थीगृह,
चित्रकुट नगर, भूवाणा प्रतापनगर
बाईपास, उदयपुर (राजस्थान)
Phone : (0294) 2440377

प्रकाशकीय

कई साल पहले पू. आचार्यश्री विजय वल्लभसूरीश्वरजी म. सा. की प्रेरणा से श्री महावीर जैन विद्यालय की स्थापना हुई ।

जैन विद्यार्थीओं को शैक्षणिक सुविधा मिले, साथमें धार्मिक संस्कार मिले;.... उनका सर्वमुखी विकास हो; इस संस्था का यही उद्देश्य रहा है ।

आज तक हजारों जैन विद्यार्थी इस संस्था के आलंबन से पढ़कर तैयार हुए हैं और देश के, समाज के, संघ के, शाशन के अग्रस्थानों को शोभा दे रहे हैं ।

व्यवहारिक शिक्षा के साथ 'विद्यालय' का विद्यार्थी धर्मचुस्त और आचार-संपन्न बनें इसलिए संस्था द्वारा 'जीवन उत्थान' की चार श्रेणियाँ प्रकाशित हो रही हैं, जो परम आनंद का विषय है ।

विद्यालय के धार्मिक अभ्यासक्रम की समिति के सदस्य (सभासद) डॉ. रमणभाई ची. शाह, श्री सेवंतीभाई के. शाह, श्री अरविंदभाई आर. शाह, श्री जयंतीभाई मणीलाल शाह और श्री जवाहरलाल मोतीचंद शाहने चारों श्रेणियों के अभ्यासक्रम की रूपरेखा तैयार की हैं इसलिए हम उनके आभारी हैं ।

पू. वैराग्यदेशनादक्ष आचार्य श्री हेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. के शिष्य गणिवर्यश्री कल्याणबोधि विजयजी महाराजश्री ने अपनी संयम साधना और अति व्यस्तता के बावजुद, विद्यार्थीओं के भाविसंस्कार नजर में रखते हुए संस्था के प्रति स्नेहवश से इस **'जीवन उत्थान'** श्रेणी का अनुमोदनीय कार्य बहुत ही परीश्रम लेकर संपादीत कीया । उस वजह संस्था उनकी ऋणी है ।

संस्था में पाँच वर्ष रहेनवाले विद्यार्थी गण ईस उत्थान श्रेणी का तलस्पर्शी अध्ययन करेंगे तो उनके जीवन में जरूर वास्तविक उत्थान होगा; इस बारे में बीलकुल शंका नहीं है ।

इस 'जीवन उत्थान' श्रेणी का अध्ययन करके विद्यार्थीगण धर्म संपन्न, आचार संपन्न और संघ-शासन के रखवालें बनें यही शुभाभिलाषा.....

अषाड़ सुदी - 3, बुधवार
दिनांक : 02-07-2003
मुंबई-36.

मंत्रीगण
श्री महावीर जैन विद्यालय

किंचित् प्रास्ताविकम्

प्रारंभ से ही श्री महावीर जैन विद्यालयने संस्था के प्रेरक परमपूज्य परमोपकारी युगदृष्टा आचार्य भगवंत श्री विजयवल्लभसूरीश्वरजी के मार्गदर्शन के अनुसार व्यावहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा देने के कार्यको अपने ध्यये के रूपमें स्वीकार किया था । इस वजहसे संस्थाके बंधारण और नीति-नियम अनुसार संस्थामें रहकर अभ्यास करते विद्यार्थी/विद्यार्थीनियों के लिए धार्मिक वर्गोमें हाजिर रहना और धार्मिक परीक्षामें उत्तीर्ण होना जरूरी (Complusory) बनाया गया है । अपनी नई पीढ़ी को व्यावहारिक शिक्षण के साथ, धर्म संस्कार के घड़तरका भी फायदा मीले यही ही इसके पीछे की द्रष्टी हैं ।

इस नियमानुसार संस्था के सभी विद्यार्थीगृहों और कन्या छात्रालयमें धार्मिक शिक्षकों की नियुक्ति करके, नियमित धार्मिकवर्ग चलाने की और धार्मिक परीक्षा लेने की व्यवस्था की गई है । धार्मिक अभ्यास क्रमसर हो सके इसलिए अभ्यासक्रम को चार श्रेणियोंमें बाँटा गया है ।

साधर्मिक भक्ति-उत्थान को जीवन का मुख्य उद्देश्य बनाकर इसके लिए सतत प्रयत्नशील रहनेवाले पू. आचार्यदेवश्री विजय वल्लभसूरीश्वरजी म. सा. इस विद्यालय के प्रारंभसे ही प्रेरक रहे हैं ।

उनका अति उदार आशय यह था कि जैन विद्यार्थीओं को शिक्षणके साथ धार्मिक संस्कार मिले और जैनधर्म से वाकेफ और संस्कारी युवागण देश के और जगत के उच्च स्थानों पर बिराजित हों और जैन संघका, राष्ट्र का और विश्व का हित करें ।

आज हम देख सकते हैं कि धार्मिक संस्कार वंचित् एक मात्र व्यवहार शिक्षासे आगे बढ़कर देश के उच्च स्थानों पर बैठे हुए लोगोंने देश को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कारिक सभी दृष्टि से कैसा बरबाद किया है ।

पूर्वकालमें राजा के मंत्री बहुधा जैन थे । ये मंत्री आचार्यो के भक्त थे । आचार्यो के संसर्ग की वजहसे वे परमार्थ दृष्टिवाले और लोकहित को हृदयमें रखनेवाले थे । इसलिए राज्य सुव्यवस्थित चलते थे और लोग भी खुश थे ।

वर्तमान राज्यादि उच्च स्थानों पर शिक्षितोंकी नियुक्तिकी व्यवस्था होने के कारण जैन संघकी बुद्धिशाली व्यक्तियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करके सभी क्षेत्रमें उच्च स्थान प्राप्त कर के जनहित की प्रवृत्ति कर शकें ऐसे शुभ आशयसे श्री महावीर जैन विद्यालय की स्थापना हुई है ।

मुंबई, अहमदाबाद, वडोदरा, भावनगर, वल्लभविद्यानगर, पूना, उदयपुर, जैसे बड़े शहरोंमें स्थापित इस विद्यालयोमें हजारों युवान पढ़लीखकर देश-विदेशमें उच्च स्थानों पर पहुँचे । धार्मिक संस्कार प्राप्त किये । यहाँ से पढ़कर बाहर नीकले विद्यार्थी पुण्ययोगसे श्रीमंत बनकर अनेक की साधर्मिक भक्ति करने लगे । इस सबका श्रेय श्री महावीर जैन विद्यालय को हैं ।

कित कितने डॉक्टर, वकील, ईजनेर, आदि को कहते हुए सुना है कि अगर श्री महावीर जैन विद्यालय न होता तो आज हम इस स्थान पे न होते । आज भी संस्थामें से बाहर निकलकर श्रीमंत बने हुए भूतपूर्व विद्यार्थीगण संस्था कों लाखों रूपये का दान देकर ऋणमुक्त और कृतार्थ बन रहे हैं । संस्था का शुभ उद्देश्य है कि जैन युवकको व्यवहारिक अभ्यास की अनुकूलताके साथ धार्मिक संस्कार मिलते रहें । यहाँ से निकला हुआ युवान शिक्षित हो, तेजस्वी हो और साथमें धार्मिक संस्कारवाला हो । वो कुटुंब का (परिवारका) पोषक बने, देव-गुरुका भक्त बने, संघका सेवक बने, समाजका रक्षक बने और आत्मा का उद्धारक बने ।

इस धार्मिक अभ्यासक्रमकी रूपरेखा विद्यालय को अभ्यासक्रम समितिके सदस्यों - डॉ. रमणलाल ची. शाह, श्री सेवंतीलाल के. शाह, श्री अरविंदभाई आर. शाह, श्री जयंतीलाल मणीलाल शाह तथा श्री जवाहरलाल मोतीलाल शाहने तैयार करके दी है । अभ्यासक्रम में सभी विषयोंका (Subject) समाविष्ट किया गया हैं। इसलिए हम धार्मिक अभ्यासक्रम समिति के हार्दिक आभारी हैं ।

धार्मिक अभ्यासक्रम की रूपरेखा तैयार हो जाने के बाद इसके लिए श्रेणी 1 से 4 के पुस्तक तैयार करने के कार्य को पूर्ण करने की जिम्मेदारी श्री महावीर जैन विद्यालय के ट्रस्टीश्री प्राणलालभाई के दोशीने ले ली थी । उन्होंने तुरंत

आचार्य श्री हेमचंद्रसूरीश्वरजी के शिष्य गणिश्री कल्याणबोधि विजयजी म. सा. का संपर्क करके गुरुदेव को धार्मिक अभ्यासक्रम के पुस्तक तैयार करने की बिनती की । गुरुदेवने श्री महावीर जैन विद्यालय की धार्मिक शिक्षा और संस्कार की प्रवृत्ति स्वीकार करके कुछ ही समय में कुछ पुस्तकों की रचना की ।

आचार्य श्री हेमचंद्रसूरि शिशु गणिश्री कल्याणबोधि विजयजी महाराज साहब का धार्मिक पुस्तकों के संकलन के सहयोग बदल हम दिलसे उनके अत्यंत आभारी हैं । गुरुदेव के आशीर्वाद विद्यालय पर बरसते रहें ऐसी भावना हम रखतें हैं ।

धार्मिक अभ्यासक्रम के पुस्तकों का प्रुफ रीडींग करने के और प्रीन्ट करने के कार्य में अनेक व्यक्तियोंने साथ-सहकार दिया है उनके भी हम हृदयपूर्वक आभारी हैं ।

इस शुभ उद्देश्य को विशेषरूप से साकार करने के लिए संस्था के द्वारा 'जीवन उत्थान' की चार श्रेणी विद्यार्थी के धार्मिक अभ्यासक्रम के रूप में प्रकाशित हो रही है; जो आनंद का विषय है ।

इस अभ्यासक्रम के माध्यम से अगणित युवानो अपने जीवन में सुसंस्कृत, धार्मिक, आचारसंपन्न बनकर आत्म शुद्धि करते रहें यही हमारी अभ्यर्थना ।

मानद् मंत्रीगण

खांतिलाल गोकलदास शाह

सुबोधरत्न ची. गारडी

प्रकाशभाई पी. झवेरी

अषाड़ सुदी - 3, बुधवार
दिनांक : 02-07-2003
मुंबई-36.

सरस्वती वंदना

हे शारदे माँ हे शारदे माँ अज्ञानता से हमें तार दे माँ,
तू स्वर की देवी, संगीत तुझसे, हर शब्द तेरा, हर गीत तुझसे,
हम हैं अकेले, हम हैं अधूरे, तेरी शरण हम, हमें तार दे माँ,
..... हे शारदे माँ....१

मुनियों ने समझी, गुणियों ने जाणी, भारत की भाषा, वांग्मय की वाणी,
हम भी तो समझें, हम भी तो जाने, विद्या का हमको अधिकार दे माँ,
..... हे शारदे माँ.... २

तू श्वेत वर्णी, कमल पर बिराजे, हाथों में वीणा, मुकुट सरपे साजे,
मनसे हमारे, मिटा दे अँधेरा, हमको उजाले का संसार दे माँ,
..... हे शारदे माँ....३

सदाचार प्रार्थना

हे प्रभु आनंद-दाता, ज्ञान हमको दीजिए,
शीघ्र सारे दुर्गुणों को, दूर हमसे कीजिए.... १
लीजिए हमको शरण में, हम सदाचारी बनें,
राष्ट्रसेवक, धर्मरक्षक, वीर, व्रतधारी बनें.... २
मात-पिता और गुरुजनों की, नित्य ही सेवा करें,
धैर्य-बुद्धि-मन लगाकर, गुण ही गाया करें.... ३
निन्दा किसी की हम किसीसे, भूलकर भी न करें,
सत्य बोले, झूठ त्यागें, मेल आपस में रहें... ४
क्रोध, मान, और लोभ-कपट से नित्य ही बचते रहें
राग-द्वेष से मुक्त बनने... नीति पर चलते रहें.... ५
प्रेम से हम सज्जनों की, सर्वदा भक्ति करें,
दीन-हीन को दान दें और धर्म में ही रत बनें.... ६
हे भगवन् हमारी लाज रखना, आप ही के हाथ है,
कर कृपा अति शीघ्र हमको, शुद्ध-बुद्धि-दीजिए.... ७

श्रेणी-२

अनुक्रमणिका

क्रम	विषय	पृष्ठ नं.
१	सूत्र स्वाध्याय (पुक्खरवरदी से सव्वसविसूत्र)	1
२	जैन धर्म परिचय	7
३	जैन तत्त्वज्ञान	12
	A. जैन दृष्टिसे काल	
	B. छ:लेश्याओं की पहचान	
	जंबुवृक्ष तथा चोरों की द्रष्टान्त	
	C. जीव विचार (भाग-२)	
४	जैनाचार	32
	A. नमस्कार मंत्र और पंचपरमेष्ठी	
	B. जैन-वैदक-आरोग्य दृष्टिसे आहार विधि	
	C. श्रावक की दिनचर्या	
	D. पर्वों और आराधना	
५	फास्टफूड़, टीन फूड़, प्रोसेस्ड फूड़, पेश्चुराइझड़ फूड़ का त्याग	50
६	जैन प्रतिभाएँ :	59
	A. अकबर प्रतिबोधक आ. हीरसूरीश्वजी म.	
	B. पंजाब केसरी आ.वि. वल्लभसूरीश्वरजी म.	
७	काव्य विभाग	68
८	तीर्थ परिचय	73
९	शांत सुधारस (अन्यत्वादि भावना)	77
१०	प्रश्नोत्तरी	83

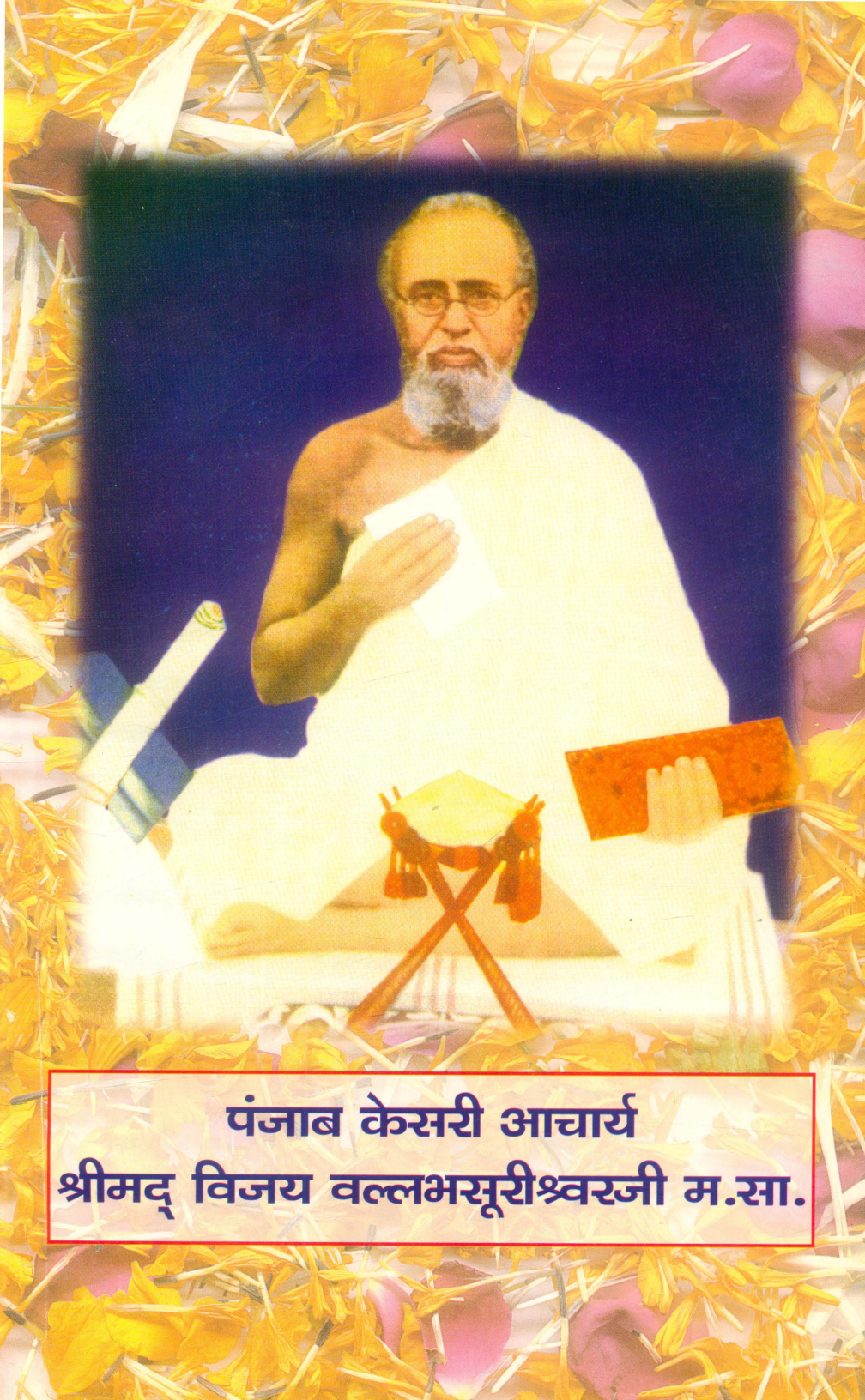

पंजाब केसरी आचार्य
श्रीमद् विजय वल्लभसूरीश्वरजी म.सा.

श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथाय नमः

1. पुक्खरदीवड्ढे (श्रुतस्तव सूत्र)

पुक्खर वरदीवड्ढे, धायइ-संडेअ जंबू दीवे अ,
भरहेरवय - विदेहे, धम्माइ-गरे नमं सामि ।।1।।
तम तिमिर-पडल विद्धं - सणस्स,
सुरगण - नरिंद - महिअस्स,
सीमाधरस्स वन्दे, पप्फोडिअ - मोहजालस्स ।।2।।
जाइ-जरा मरण - सोग पणासणस्स,
कल्लाण पुक्खल विसाल सुहावहस्स,
को देव-दाणव-नरिन्द-गणच्चिअस्स,
धम्मस्स सार-मुवलब्भ करे पमायं ? ।।3।।
सिद्धे भो ! पयओ णमो जिणमए नन्दी सया संजमे,
देवं नाग सुवन्न किन्नरगण-सब्भूअ - भावच्चिए,
लोगो जत्थ पइट्ठिओ जगमिणं तेलुक्कमच्चासुरं,
धम्मो वड्ढउ सासओ विजयओ धम्मुत्तरं वड्ढ ।।4।।
सुअस्स भगवओ, करेमि काउस्सग्गं, वंदण वत्तिआण०

भावार्थ : इस सूत्र में ढाई द्वीप में विचरते तीर्थंकरों की तथा ज्ञान की स्वरूप, प्रतिज्ञा और महत्ता सहित स्तुति हैं ।

सद्धाणं बुद्धाणं (सिद्धस्तव) सूत्र

सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं,
लोअग्गमुवगयाणं, नमो सया सव्व-सिद्धाणं ।।1।।
जो देवाण विदेवो, जं देवा - पंजली नमंसंति,
तं देव-देव महिअं, सिरसा वन्दे महावीरं ।।2।।

इक्को वि नमुक्कारो, जिणवर-वसहस्स वद्धमाणस्स,
संसार सागराओ, तारेइ नरं व नारिं वा। ।3।।
उज्जिंत सेल सिहरे, दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स,
तं धम्मं चक्क वट्टिं, अरिट्ठनेमिं नमंसामि ।4।।
चत्तारि अट्ठदस दोय, वंदिया जिणवरा चउव्वीसं,
परमट्ठनिट्ठिअट्ठा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।5।।

भावार्थ : इसमें सर्व सिद्ध, श्री महावीर स्वामी, श्री नेमिनाथ तथा अष्टापदादितीर्थ पर बिराजमान तीर्थंकरों की स्तुति हैं ।

'चत्तारि' गाथा में समेतशिखर, शत्रुंजय, गिरनार और नंदीश्वर आदि की भिन्न भिन्न स्तुतियाँ समाई गई हैं ।

वेयावच्चगराणं सूत्र

वेयावच्चगराणं, संतिगराणं, समदिट्ठिसमाहिगराणं, करेमि काउस्सगं अन्नथ०

भावार्थ : इसमें शाशन देवों को, उनके गुणों को, स्तुतिपूर्वक याद कीया गया हैं ।

भगवानादि-वन्दन सूत्र

भगवानहं आचार्यहं, उपाध्यायहं, सर्वसाधुहं,

भावार्थ : भगवंतो को, आचार्यों को, उपाध्यायों को और सभी साधुओं को नमस्कार हो !

देवसिअ-पडिक्कमणे ठाउँ ? सूत्र

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसिअ पडिक्कमणे ठाउं ? इच्छं. सव्वसवि, देवसिअ, दुच्चिंतिअ, दुब्भासिअ, दुच्चिट्ठिअ, मिच्छामि दुक्कडं ।

भावार्थ : यह प्रतिक्रमण आवश्यक सूचक मूल सूत्र है । इसमें दिन-संबंधी मन, वचन, काया की अशुभ प्रवृत्ति को मिथ्या करने की क्रिया है ।

इच्छामि ठामि सूत्र

इच्छामि ठामि काउस्सग्गं, जो मे देवसिओ अइआरो,
कओ, काईओ, वाईओ, माणसिओ,
उस्सुतो, उम्मग्गो, अकप्पो, अकरिणज्जो,
दुज्झाओ, दुव्विचिन्तिओ, अणायारो, अणिच्छिअव्वो,
असावग्ग-पाउग्गो, नाणे दंसणे चरित्ताचरिते,
सुए, सामाइए, तिण्हं गुत्तीणं, चउण्हं कसायाणं,
पंचण्हं-मणुव्वयाणं, तिण्हं गुणव्ययाणं,
चउण्हं सिक्खावयाणं,
बास्स विहस्स सावग धम्मस्स,
जं खण्डिअं जं विराहिअं
तस्स मिच्छामि दुक्कडम् ।

भावार्थ :- इस सूत्र से दिनमें लगे आचारों के अतिचारों, अतिचारों होने की भिन्न भिन्न वजह, और बार व्रत की खंडना के हेतु संबंधी यादपूर्वक मिथ्या करने की क्रिया हैं । अर्थात् यह सूत्र 'वंदित्तु' सूत्र का छोटे अर्थवाला सूत्र हैं ।

नाणम्मि सूत्र

नाणम्मि दंसणम्मि अ, चरणम्मि तवम्मि तह य वीरयम्मि,
आयरणं आयारो, इअ एसो पंचहा भणिओ ।।1।।
काले विणए बहुमाणे, उवहाणे तह अनिण्हवणे,
वंजण अत्थ तदुभए, अट्ठविहो नाणमायारो ।।2।।
निस्संकिअ निक्कंखिअ, निव्वितिगिच्छा अमूढ दिट्ठि अ,
उववूह थिरीकरणे, वच्छल्ल पभावणे अट्ठ ।।3।।
पणिहाण जोगजुत्तो, पंचहिं समिईहिं तीहिं गुत्तीहिं,
एस चरितायारो, अट्ठविहो होइ नायव्वो ।।4।।

बारस विहम्मि वि तवे, सब्भिन्तर बाहिरे कुसल-दिट्ठे,
अगिलाई अणाजीवी, नायव्वो सो तवायारो ।।5।।
अणसण मूणो अरिया, वित्ती संखेवणं रसच्चाओ,
कायकिलेसो संलीणया य बज्झो तवो होइ ।।6।।
पायच्छित्तं विणओ, वेयावच्चं तहेव सज्झाओ,
झाणं उस्सग्गो वि अ अब्भिन्तरओ तवो होइ ।।7।।
अणिगूहिअ बल-वीरिओ, परक्कमइ जो जहुत्तमाउत्तो,
जुंजइ अ जहाथामं, नायव्वो वीरिआयारो ।।8।।

भावार्थ :- प्रणिधानके योग सहित चारित्राचार पाँच समिति और तीन गुप्ति ये आठ प्रकार जानने योग्य हैं ।

इस सूत्र में पाँच आचारों का उसके सुक्ष्म-बारीकीयों के साथ पद्धतिसर वर्णन किया है ।

सुगुरु वंदन सूत्र

इच्छामि खमासमणो ! वन्दिउं जावणिज्जाए निसीहिआए,
अणुजाणह मे मिउग्ग हं निसीहि,
अहो कायं काय संफासं,
खमणिज्जो भे ! किलामो, अप्पकिलन्ताणं बहु सुभेण भे !
दिवसो वइक्कन्तो,
जत्ता भे ! जवणिज् ! जं च भे,
खामेमि खमासमणो !
देवसिअं वइक्कम्मं,
आवस्सिआए पडिक्कमामि खमासमणाणं,
देवसिआए आसायणाए, तित्तीसन्नयराए, जंकिंचि मिच्छाए,
मण दुक्कडाए, वयदुक्कडाए, कायदुक्कडाए,
कोहाए, माणाए, मायाए, लोभाए,

सव्व कालिआए, सव्व मिच्छोवयाराए, सव्व धम्माइक्कमणाए,
आसायणाए, जो मे अइआरो कओ, तस्स खमासमणो !
पडिक्कमामि, निन्दामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि ।

भावार्थ : इससे सुगुरु को द्वादशावर्त वन्दन करके उनके प्रति हुए अपराधों की क्षमा याचना की जाती है ।

दूसरी बार वन्दन करते समय 'आवस्सिआए' पद न कहना !

देवसिअं आलोउं सूत्र

इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! देवसिअं आलोउं ? इच्छं, आलोएमि, जो मे देवसिओ०

सात लाख सूत्र

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय,
सात लाख तेउकाय, सात लाख वाउकाय,
दश लाख प्रत्येक वनस्पतिकाय, चौद लाख साधारण-वनस्पतिकाय,
बे लाख बेइन्द्रिय, बे लाख तेइन्द्रिय, बे लाख चउरिन्द्रिय
चार लाख देवता, चार लाख नारकी, चार लाख तिर्यंच-पंचेन्द्रिय,
चौद लाख मनुष्य, अेवंकारे चोराशी लाख जीवायोनिमां हि माहरे जीवे
जे कोइ जीव, हण्यो होय, हणाव्यो होय हणतां प्रत्ये अनुमोद्यो होय,
ते सवि मन, वचन, कायाए करी मिच्छामि दुक्कडम् ।

भावार्थ : इसमें तीन भुवन में एक से वर्ण, गंधे, रसें और स्पर्शवाली योनियाँ कुल और अवान्तर कितनी है उसके वर्णनपूर्व का अपने से जो जीव योनियाँ की हत्या हुई हो, हत्या कराई हो और हत्या करनेवाले को अनुमति दी हो इस बाबत

मिच्छामि दुक्कडम् दिया गया है ।

जीवों की समझ, उपजने के स्थान तो असंख्याता है, किन्तु उसके वर्ण, गंध, रस और स्पर्श एकसे हों सभी जीवों का एक स्थानक या एक योनि कहा जाता है । उनकी गिनती इस प्रकार है :-

पृथ्वीकाय के मूल भेद 350 उनको पाँच वर्ण से पाँच गुना करने से 1750 होते हैं, उनको दो गंध से दो गुना करने से 3500 होते हैं, उनको आठ स्पर्श से आठ गुना करने से 1,40,000 होते हैं, उनको पाँच संस्था से पाँच गुना करने से 7 लाख भेद पृथ्वीकाय के होते हैं । ऐसे सभी जीवों की गिनती करने से, इस रीतसे 84 लाख उपजने के स्थान होते हैं । ऐसे 84 लाख योनि होती हैं ।

अढार पापस्थानक सूत्र

पहेले प्राणातिपात, बीजे मृषावाद, त्रीजे अदत्तादीन, चौथे मैथुन, पाँचमे परिग्रह, छट्ठे क्रोध, सातमे मान, आठमे माया, नवमे लोभ, दशमे राग, अग्यारमें द्वेष, बारमे कलह, तेरमे अभ्याख्यान, चौदमे पैशुन्य, पंदरमे रति-अरति, सोलमे परपरिवाद, सत्तरमे माया-मृषावाद, अढारमे मिथ्यात्वशल्य, ए अढार पाप स्थानक मांहि महारे जीवे जे कोइ पाप सेव्युं होय, सेवराव्युं होय, सेवतां प्रत्ये अनुमोद्युं होय, ते सर्वे मने, वचने, कायाए करी मिच्छामि दुक्कडं ।

भावार्थ : इस सूत्र में पाप के प्रकार क्रमसर बताकर इसमें अपने से कीसी भी प्रकार से हुए पाप के याद करके क्षमा माँगी जाती है । पाप अठारह प्रकार से बँधाता है यह बताया गया है ।

सव्वस्सवि सूत्र

सव्वस्सवि देवसिअं, दुच्चिंतिअ, दुब्भासिअ, दुच्चिट्ठिअ, इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! इच्छं, तस्स मिच्छामि दुक्कडं ।

इच्छामि पडिक्कमिउं-सूत्र

इच्छामि पडिक्कमिउं ? जो मे देवसिओ अइयारो कओ० ।

2. जैन धर्म परिचय

जीवनमें धर्म की जरुरत

जीवनमें जितनी सुख की जरुर है इससे कही गुना ज्यादा धर्म की जरूर है, क्योंकि सुख धर्म से ही मिलता है । 'सुखम् धर्मात् दुःखम् पापात्' । धर्म से सुख, पाप से दुःख - यह सनातन सत्य है । धर्म परलोक को तो शुभ करता ही है, इतना ही नहीं, बल्की वह इस लोक में जीनेवाले जीवनमें भी सुख देता है । वह ऐसे -

धर्म से प्रत्यक्ष सुख -

सुख अंतर के अनुभव की चीज है, बाह्य पदार्थों में सुख नहीं है । बाह्य सुखदायक चीजवस्तुओं के ढ़ग हो लेकिन चित्त जो कोई चिंता से जलता हो तो इससे सुखका अनुभव नहीं होता कम बुद्धिवाले मानते हैं कि सुख धनमें हैं, सुख खान-पानमें हैं, सुख मानपान और सत्ता-साह्यबी में हैं, लेकिन जगत में देखने से दिखता है कि जिसके पास धन-संपत्ति कम होते हुए भी वे संतोष से ज्यादा सुखी है और जिनके पास ढेर सारे या् पूरते धनसंपत्ति हैं उनके जीवन में चिंता-संताप से जरा सी भी सुख-शांति नहीं होती ।

अगर सुख धनसंपत्ति का गुण हो तो जितनी धन-संपत्ति ज्यादा हो इतना ज्यादा सुख का अनुभव हो सके । वैसे ही सुख जो खान-पान का गुण हो तो जितना खान-पान ज्यादा उतना सुख ज्यादा लगना चाहिए । लेकिन अनुभव भिन्न है । एक-दो लड्डु खाने से सुख होता है, लेकिन ज्यादा खाने से उल्टी जैसा होता है । जीवको असुख(दुःख) लगता है । एक पत्नी करने से जो सुख लगता है वह सुख दो-तीन पत्नीयाँ करने से बढ़ने की जगा कम हो जाता हैं ।

तो क्या ये धन-परिवार-मेवे-मिठाई आदि को सुख कहा जा सकता है ।

दूसरी तरह सोचें तो एक ही चीज एकबार सुखरुप लगती है और वही चीज दूसरी बार दुःखरुप लगती है । तो क्या कोई भी चीज-वस्तुमें निश्चित रुपसे दुःख ही है या सुख ही है ऐसा कहलाता है ? ना, नहीं कहलाता ।

सुख बाह्य चीज का धर्म नहीं, यह तो आत्मा की चीज है । लेकिन ये तब ही अनुभूतित होता है जब दिल में कोई चिंता न हो, मनमें कोई भय न हो, अंतर में न

कोई संताप हो, न कोई अशांति हो । मन, दिल, अंतर निश्चिंत, निर्भय, शांत और आत्मा में मस्त हो तो सुख का-सच्चे सुख का अनुभव होता है ।

धर्म ऐसा सुख देता है, धर्म ऐसी आराम (चैन) की स्थिति खड़ी कर देता है कि जैसे जंगल में जोरों की भूख लगी हो और सूखी रोटी ही मिलें तो ये खाने में भी महाआनंद मिलता है, इस तरह धर्मात्मा को धर्मसमझ से दुन्यवी सामान्य संजोग में भी महान आनंद मीलता है - जैसे कि साधु-महर्षि को उपरांत धर्म ऐसे पुण्य का ढ़ेर देता है कि ये जीव को परभवमें अच्छी देव, मनुष्यादि गति, अच्छा फल, आरोग्य, ऋद्धि-समृद्धि, देव गुरु आदि धर्म-सामग्री और सद्‌बुद्धि देता है । इस लोक और परलोक में सुख चाहिए तो धर्म आराधना की खास जरूर है । कहा है कि -

व्यसनशतगतानां क्लेशोरोगातुराणां,
मरण भय हतानां दु:ख शोकार्दितानाम्,
जगति बहुविधानां व्याकुलानां जनानां,
शरणमशरणानां नित्यमेको हि धर्म: ।

भावार्थ : सेंकडों संकट प्राप्त होनेवालो को, क्लेश और रोग से पीड़ित को, मरण के, भय से भयभीत बने हुए को, दु:ख-शोक से दुखित को, अनेक प्रकार से घबराये हुए (आकुल-व्याकुल) लोगों को और निराधार को, जगत में हमेशां धर्म ही एक मात्र कारणभूत है । ऐसे समय मे ऐसी-ऐसी व्यक्ति को भी 'हे भगवान' स्फूरता है - यही बताता है कि भगवान और धर्म ही अंत में शरणभूत है ।

जीवन में धर्म की जरूर इसलिए है कि जीव अपने प्रति दूसरों की ओर से पापवर्ताव नहीं लेकिन धर्मवर्ताव ही चाहता है । उदा० नास्तिक भी इच्छा करता है कि 'कोई मेरी हिंसा न करें, मेरी ओर दया-स्नेह-उदारता से वर्ते, मेरे आगे झूठ न बोलें, मेरी चीज की चोरी न करें, मेरी पत्नी की ओर बूरी नजर से न देखें.....' आदि तो इसमें क्या ईच्छा रखी ? दूसरों की ओर से अपने प्रति हिंसा पाप नहीं लेकिन अहिंसा धर्म तो दूसरे भी ऐसी इच्छा करते हैं । इसलिए वर्ताव पाप का नहीं, लेकिन धर्म का ही जरूरी है; यह सिद्ध होता है । इसलिए जीवन में धर्म जरूरी है ।

धर्म परीक्षा

कौनसा धर्म वास्तविक हो सकता है ? ऐसा एक प्रश्न (सवाल) उठता है । इसका उत्तर यह है कि जो धर्म सोने की तरह कष, छेद और ताप (गर्मी) की परीक्षा में से उत्तीर्ण हो वो ही सच्चा धर्म है । ऐसा ही धर्म आदरणीय है । इस विषयमें विस्तार से सोचें -

पहली परीक्षा(कसौटी) :- 'कष' यानि कसौटी परीक्षा में उत्तीर्ण । धर्म यह है कि जिसमें विधि-निषेध बताये (कहें) हो अर्थात् करने योग्य अच्छी प्रवृत्ति का योग्य विधान किया हो और त्यजने योग्य बुराई का निषेध किया हो । (निषेध यानि किंसी चीज से निवृत्त होने का कहा हो)

दूसरी परीक्षा : विधि-निषेध के अनुरुप अर्थात् पुष्ट करनेवाले आचार-अनुष्ठान जिस धर्म में फरमाये हो वह धर्म 'छेद' परीक्षा में उत्तीर्ण कहलाता है । उदा० पहले निषेध तो किया कि, "किसी जीव की हिंसा न करें ।" बाद में अनुष्ठान के रूप में कहा कि 'पशु को मार कर यज्ञ करना ।' तो यह निषेध के अनुरुप नहीं हुआ । उल्टा हिंसा के निषेध का भंग करनेवाला हुआ । जैन धर्म में ऐसा नहीं है, क्योंकि जैन धर्म में गृहस्थ या साधु के लिए जो आचार-अनुष्ठान बताये हैं, वे विधि और निषेध के साथ संगत है, पोषक है । क्योंकि इसमें जीवरक्षा की जयणा (यतना) को मुख्य आधार रखकर आचार अनुष्ठान बताये हैं ।

साधु के लिए कहा गया हैं, 'समिति, गुप्ति का पालन करो' अर्थात् जीवरक्षा हो, व्रतों की यतना हो, ऐसी रीत से चलो, बोलो, बैठो, उठो, भिक्षा लो...' आदि । गृहस्थ-श्रावक को भी सामायिक, व्रत, नियम, देव-गुरु भक्ति, आदि अनुष्ठान ऐसे बतायें हैं कि जो विधि-निषेध के अनुरूप हैं ।

तिसरी परीक्षा : पहले दोनों के अनुरुप तत्वों-सिद्धांतों धर्म की ताप-परीक्षा यह है कि विधि-निषेध और आचार-अनुष्ठान संगत बन सके ऐसे तत्त्व और सिद्धांत मान्य होने चाहिए । उदा० तत्त्व माना कि एक शुद्ध, बुद्ध (आत्मा) यही ही तत्त्व है । अब जो ऐसा ही हो तो विधि-निषेध कैसे हों ? निषेध यह है कि 'कोई भी जीव को ना मारो ।' जो आत्मा एक ही हो, दूसरा कोई आत्मा ही न हो, तो हिंसा किसकी ? कौन किसको मारे ?

इसी तरह से दूसरे तत्त्व मानते हैं कि, 'आत्मा क्षणिक है ।' अर्थात् जीसका क्षण में नाश होता है । दूसरी क्षण में दूसरा नया आत्मा पैदा हो कर इसी ही क्षण में नाश पामता है । अब सोचो कि आत्मतत्त्व जो ऐसा क्षणिक हो तो निषिद्ध हिंसा के अनाचरण का फल और विहित तपध्यान के आचरण का फल किसको मिले ? क्योंकि हिंसा या तप-ध्यान ऐसा माना कि जिसके मूल विधि-निषेध संगत हुए नहीं । जो जीव एकान्त से नित्य ही है अर्थात् इसमें कोई भी बदलाव (हेराफेरी) नहीं है, ऐसा सिद्धांत हो तो फल-भोग के लिए जरूरी परिवर्तन को अवकाश ही कहाँ रहता है ? जो ये नहीं तो विधि-निषेध किसको लागु होते हैं ? नित्य जीवों को नहीं । इसलिए यह तत्त्व-सिद्धांत की मान्यतामें विधि-निषेध और आचार-अनुष्ठान संगत नहीं बने ।

जैनधर्म कहता है कि, 'आत्मा अनंता है, एवं वह नित्यानित्य है ।' इसलिए विधि-निषेध और आचार तत्त्व-सिद्धांत के साथ संगत बन सकता है । आत्मा अनंत है; इसलिए एक दूसरे की हिंसा का प्रसंग हो सकता है । नित्यानित्य है; इसलिए जीव द्रव्य रूप से नित्य और अवस्था (पर्याय) रूप से अनित्य है, इसलिए अवस्था बदलाती है; इससे फल भोगने के लिए दूसरी अवस्था आ सकती है ।

इस तरह से जैन धर्म तीनों - कष, छेद और ताप की परीक्षा में उत्तीर्ण होने से सौ टच के सोने जैसा शुद्ध है । इस परसे धर्म का स्वरूप क्या हो सके वह समझमें आयेगा ।

जैनधर्म विश्वधर्म है ?

क्या जैनधर्म को विश्वधर्म कह सकते हैं ? हाँ कह सकते हैं । क्योंकि

1) जैन धर्म में विश्व का यथास्थित स्वरूप पेश किया गया है ।
2) समस्त विश्व को ग्राह्य ऐसे सर्वव्यापी नियम इसमें फरमाये गये हैं ।
3) इसमें धर्मप्रणेता और आराध्य इष्टदेव कोई एक स्थापित व्यक्ति नहीं परंतु आराध्य और प्रणेता के लिए जो निश्चित गुण और विशेषता चाहिए वे-वीतरागता, सर्वज्ञता, सत्यवादिता आदि विशेष गुणवालों को ही इष्टदेव और प्रणेता माना गया है ।
4) इसमें विश्व के प्राथमिक-प्रारंभिक योग्यतावाले जीव से लेकर क्रमश:

सर्वोच्च कक्षा तक पहुँचे हए जीवों का हित हो, ऐसी और पालन में उतर सके (पालन करने में शक्य हो) ऐसी विविध कक्षावाली साधना बताई है ।

5) इसमें समस्त विश्व के युक्तिसिद्ध और अद्‌भूत अर्थात् सचमुच विद्यमान तत्त्वों पर प्रकाश डाला गया हैं ।

6) जैनधर्म में विश्व की दु:खद समस्या का हल ला सकें ऐसे अनेकांतवादादि सिद्धांत और अहिंसा-अपरिग्रहादिरूप आचार-मर्यादा देखने मिलते हैं ।

इसलिए जैनधर्म को विश्वहितकारी विश्वधर्म जरूर कह सकतें हैं ।

गाँधीजी के पुत्र देवीदासने एक समय में लंडन में समर्थ नाट्यकार और चिंतक ज्योर्ज बर्नाड़ शो को पूछा, "जो परलोक जैसी चीज हो तो आप इस जन्म के बाद कहाँ जन्म हो -ऐसी इच्छा करते हो ?"

बर्नाड़ शोने कहा, "तो मैं जैन होने को माँगता हूँ ।"

देवीदासने फिर से पूछा, "अरे, परलोक मानने वाले हमारे यहाँ 30 क्रोड हिन्दु हैं; उसको छोड़कर आप क्यों छोटी जैन जाति में जन्म लेना माँगते (चाहते) हो ?"

बर्नाड शोने कहा, "जैन धर्म में इश्वर-परमात्मा बनने का इजारा (ठेका परवाना) (Sole Agency) किसी भी एक व्यक्ति को नहीं दीया गया हें लेकिन विशिष्ट योग्यतावाला कोई भी मनुष्य आत्मा की उन्नति-उर्ध्वीकरण करके परमात्मा बन सकता हैं । तो इसमें ही नंबर न लगाउँ ? और इसके लिए जैनधर्म में आचरण कर सकें ऐसा व्यवस्थित क्रमिक साधनामार्ग बताया गया है, जो वैज्ञानिक भी है । ऐसा व्यवस्थित सक्रिय क्रमिक और वैज्ञानिक साधनामार्ग दूसरा कोई नहीं ।"

धर्म के मुख्य दो विभाग हैं - एक विभाग पालन करने के आचार-विचार का और दूसरा विभाग है जानने के और मानने के तत्त्वों का । दूसरे शब्दो में कहें तो धर्म को यह बताना चाहिए कि यह विश्व क्या है ? विश्व व्यवस्था किस तरह से चलती है ? इसमें जीव के साथ कौन से तत्त्व जुड़े हैं ? और ऐसे आचार विचार कौन-कौन से हैं कि जो मोक्ष की ओर प्रयाण प्रारंभ करायें और इस प्रयाण को अखंड रखें, सफल बनायें ।

3. जैन तत्त्वज्ञान

A. जैन दृष्टिसे काल

काल : काल का कार्य है नया का पुराना करना । उसको काल की संज्ञा दी गई हैं । वर्तमानकाल, भूतकाल, भविष्यकाल, सूर्योदयकाल, बाल्यकाल, यौवनकाल आदि उसके पर्याय है । किसी भी पदार्थ के बनने के समय का ख्याल काल से आता है । या कोई चीज कब बनी थी, कब बनी है, कब बनेगी उसका निश्चित ज्ञान काल द्वारा मिलता है । काल का सूक्ष्म गणित निम्न प्रमाण से (निम्न लिखित) है -

1. **समय** = ज्ञानियों की दृष्टि में जिसके दो भाग न हो या जो कदापि विभाजित न हो सकें ऐसे सूक्ष्मतम काल अंश को 'समय' कहा जाता है । कोई शक्तिशाली व्यक्ति अत्यंत जीर्ण वस्त्र को चीरे (फाड़े) तब वस्त्र के एक रेशे के बाद दूसरे रेशे तक फाड़ने में ऐसा असंख्य समय बीत जाता है ।

असंख्य समय	= 1 आवलिका
256 आवलिका	= 1 क्षुल्लक भव
1711 क्षुल्लक भव	= 1 श्वासोश्वास
7 श्वासोश्वास	= 1 स्तोक
7 स्तोक	= 1 लव
77 लव	= 1 मुहूर्त (मुर्हत=48 मिनट = 2 घडी = 3773 प्राण = 65536 क्षुल्लक भव = 1,67,77,216 आवलिका
30 मुहूर्त	= 1 दिन
15 दिन	= 1 पक्ष
2 पक्ष	= 1 मास
2 मास	= 1 ऋतु
3 ऋतु	= 1 अयन
2 अयन	= 1 वर्ष
84 लाख वर्ष	= 1 पूर्वांग
84 लाख पूर्वांग	= 1 पूर्व (70560 अबज वर्ष)

पल्योपम 1 योजन लम्बा, चौड़ा तथा गहरा खड़ा कि जिसको सात दिन के युगलिकके एक-एक बाल के असंख्य टूकडे से पूर्णत: भरने में आये कि जिस परसे चक्रवर्ती की विशाल सेना पसार हो जाय तो भी जिसमें से एक बाल का ज्यादा टूकडा समाने की जगा न रहे । इस तरह भरे हुए खड्डेमें से हर सौ साल में बाल का एक टूकडा बाहर निकालने में आये तो इस खड्डे को संपूर्णरूप से खाली होने में जितना समय लगे उस समय को सूक्ष्म 'अध्धा पल्योपम' कहा जाता है । उस परसे आयुष्य की गिनती होती है ।

1 पल्योपम	= असंख्य वर्ष
10 कोडाकोडी पल्योपम	= सागरोपम
10 कोडाकोडी सागरोपम	= 1 अवसर्पिणी
10 कोडाकोडी सागरोपम	= 1 उत्सर्पिणी
अवसर्पिणी+उत्सर्पिणी	= 1 कालचक्र
अनंत कालचक्र	= 1 पुद्गल परावर्त

कालचक्र

जिस तरह घड़ी के 12 अंकोमें से 6 पूर्व दिशामें और 6 पश्चिम दिशा में विभाजित करे तो दो भाग स्पष्ट दिखते हैं ठीक उसी तरह कालचक्र के भी 6 पूर्वार्धमें और 6 पश्चिमार्ध में ऐसे 12 भाग होते हैं । और इस हरेक भाग को आरा कहा जाता हैं । कालचक्र के मुख्य दो भाग हैं : 1 अवसर्पिणी काल, 2 उत्सर्पिणी काल.... दोनों के 6-6 आरा होते हैं ।

अवसर्पिणी काल :- जीस काल खंडमें हर समय शुभ पुद्गलों की हानि और अशुभ पुद्गलों की वृद्धि होती हो; ऐसे समय को अवसर्पिणी काल कहते हैं ।

छः आरा के नाम (1) सुषम सुषम (2) सुषम (3) सुषम दु:षम (4) दु:षम सुषम (5) दु:षम (6) दु:षम दु:षम ।

(1) सुषम-सुषम - चार कोडाकोडी सागरोपम के आरा में मनुष्य का देहमान 3 कोस, आयुष्य 3 पल्योपम, उसके शरीर में 256 पसलियाँ होती हैं । मनुष्य को वज्रऋषभ नाराय संघयण तथा सम चतुरस्र संस्थान होता है । स्त्री-पुरुष

युगलिक रूप से उत्पन्न होते हैं । उनकी इच्छा आकांक्षाएँ दस प्रकार के कल्पवृक्ष से पूर्ण होती हैं । उनको तीन तीन दिन के अंतर से आहार की इच्छा होती है । कल्पवृक्ष के फल इतने रसप्रचुर, स्वादिष्ट, शक्तिवर्धक होते हैं कि तुवर के दाने जितना आहार लेने से संतोष होता है । अपने आयुष्य के 6 मास बाकी हो तब एक युगलिणी एक युगल को (पुत्र-पुत्री को) जन्म देती हैं । और 49 दिन तक उनका पालन करती है । उसके बाद नवजात युगल स्वावलंबी और स्वतंत्र घूमता है । उनके माता-पिता का मृत्यु आयुष्य पूर्ण होने से, एक को छींक और एक को जम्हाई आने से होती है । वे अल्प विषयी और अल्प कषायी होने से देवगति प्राप्त करते हैं । इस आरा में सुख ही सुख होता है ।

(2) सुषम :- कालमान तीन कोडाकोडी सागरोपम । देह, बुद्धि, बल, आयुष्य, कांति, पृथ्वी आदि के रसमें तथा सारभूत पदार्थों के गुण में उत्तरोत्तर हानि । देहमान 2 कोस, आयुष्य- 2 पल्योपम, और 124 पसलियाँ युक्त शरीर, आहार की इच्छा हर दो दिन बेर जितना आहार, संततिपालन 64 दिन । बाकी सभी पहले आरा की तरह ही होता है । इस आरा में लोग सुखी होते हैं ।

(3) सुषम दुःषम :- कालमान 2 कोडाकोडी सागरोपम । यहाँ सुख ज्यादा और दुःख कम होता है । देहमान 1 कोस, आयुष्य 1 पल्योपम तथा 64 पसलियाँ, आहार की इच्छा 1 दिन के अंतरपे, आमले जैसा आहार, पुत्र-पुत्री पालन-79 दिन, बाकी की सभी बातें प्रथम आरा जैसी । विशेष में इस आरा के जब 84 लाख पूर्व, 3 वर्ष और 8.1/2 मास बाकी हो तब प्रथम तीर्थंकर देवका जन्म होता है । उत्तरोत्तर हानिवाले समय के प्रभाव से कल्पवृक्ष की महिमा धीरे धीरे नष्ट होती है । लोगों को खाने के लिए धान्य की उत्पत्ति होती है । बादर (स्थूल) अग्नि प्रगट होता है । युगलिकों की प्रार्थना से प्रथम तीर्थंकर साधु बनें, उसके पहले राजा हो तब शिल्प, आदि कलाओं का प्रगटीकरण करते हैं । जिनके कारण लोग नीति-नियमों का पालन करके सात्त्विक जीवन जीते हैं । प्रथम तीर्थंकर के निर्वाण के बाद 3 वर्ष और 8.1/2 मास बाद चौथे आरा की शुरूआत होती है । तिसरे आरा में युगलिकों की उत्पत्ति क्रमशः क्षीण हो जाती है । एक चक्रवर्ती भी इस आरा में जन्म लेता है । तीर्थंकर नाम कर्म के उदय से इस आरा में तीर्थ स्थापना होने के बाद मोक्षगमन का प्रारंभ होता है ।

(4) दु:षम सुषम :- कालमान 42000 वर्ष न्यून 1 कोडाकोडी सागरोपम । मनुष्य का आयुष्य पूर्व क्रोड वर्ष, शरीरमान 500 धनुष, आहार आदि अनियमित, युगलियों की उत्पत्ति बंध, इस आरा में बाकी के 23 तीर्थंकर, 11 चक्रवर्ती, 9-बलदेव, 9-वासुदेव तथा 9-प्रतिवासुदेव होते हैं । इस आरा में उत्पन्न हुए आत्माओं का मोक्ष पाँचवे आरा में हो सकता है । इस आरा में प्रमाण में दु:ख ज्यादा और सुख कम है ।

(5) दु:षम :- अंतिम तीर्थपति के मोक्षगमन के बाद इस आरा की शुरूआत होती है । उसका कालमान 21,000 वर्ष हैं । मनुष्यों का देहमान शुरु में 7 हाथ का है । आयुष्य 13- वर्ष, पसलियाँ 16, आहार आदि अनियमितता । इस आरा के अंत तक जिनशासन 21,000 वर्ष तक चलता है । उत्सूत्र प्ररुपणा ज्यादा होती है । परस्पर मैत्री-भाव कम होता है । चढ़ती-पडती (उत्थान-पतन) का क्रम सतत चालु रहता है । पाखंडीयों की पूजा में वृद्धि । संयमी लोग कष्ट सहन करके भी प्रभु का शासन अटल-अचल रखते हैं । आराधक आत्मा आराधना कर के स्वहित-परहित सिद्ध करते रहेंगे । कषायों की उत्तरोत्तर वृद्धि, शहरों की जगह में गाँव और गाँव स्मशान में परिवर्तित होंगे । कुलीन स्त्रीयाँ आचारहीन बनेगी । अच्छे कुल के लोग दास-दासी बनेंगे । और हीन कुलवाले धर्मरसिक और साधक बनेंगे । राजा यम जैसे क्रूर होंगे । विनय मर्यादा का विनाश होगा । गुणवान लोगों की निंदा होगी । क्षुद्र जंतुओं की उत्पत्ति बढ़ जायेगी । दुष्काल (सूखा), अकाल, ज्यादा होगा । लोभी-लालचीओं की वृद्धि होगी । मत-मतांतर और मिथ्या-मतों में वृद्धि, देवता प्रत्यक्ष न हो, विद्याओं का प्रभाव कम, दूध, दहीं, घी, धान्य आदि उत्तम पदार्थों के तत्त्व में कमी । कपटी, कुशील, कदाग्रहीओं की वृद्धि । ऐसा समय (काल) ज्यादा दु:खमय और विषमताओं से सभर होगा । वर्तमान में यह आरा प्रवर्तमान है ।

(6) दु:षम दु:षम :- कालमान 21000 वर्ष । इस काल में मानवदेह 1 हाथ, पसलयिाँ 8, आहार आदि की इच्छा अमर्याद और अनियमित, दिन में सखत (कड़ी) धूप, रात में भयंकर ठंड़ी, महल-मकान आदि नष्ट हो जायेंगे, इसलिए मानव जाति वैताढय पर्वत की उत्तर और दक्षिण में, गंगा-सिंधु के आमने-सामने किनारे पे जो 36-36 बिल है वहाँ बास करेंगे । बिलवासी मनुष्य, मछलियाँ और

अन्य जलचर को पकड़कर रेत में गाड़ेंगे, दिन की कड़ी धूप से भूँजा जाने से रात में उसका मक्षण करेंगे । परस्पर क्लेश करनेवाले, दीन-हीन, दुर्बल, दुर्गंध, रोगिष्ट, अपवित्र, नग्न, बिना आचार के और माता-बहन-पत्नी प्रति विवेकशून्य मनुष्य होंगे । 6 वर्ष की बालिका गर्भधारण करके बालक को जन्म देगी । सूअरनीकी तरफ ज्यादा बच्चे पैदा करके महाक्लेश का अनुभव करेंगे । अतिशय दु:ख के कारन अशुभ कर्म उपार्जन करके नरक-तिर्यंच आदि गति प्राप्त करेंगे । इस आरा में सिर्फ दु:ख ही दु:ख हैं ।

जिनको छट्ठे आरा में जन्म धारण न करना हो उनको जीवनभर रात्रिभोजन, मांसाहार और सात व्यसनों का त्याग करना आवश्यक है । नहीं तो रात्रिभोजन मांसाहार आदि के कुसंस्कारवाले छट्ठे आरा में जन्म लेकर अनेक प्रकार के कष्ट, दु:ख और यातनाओं के भागी बनेंगे । और इस तरह कषाय परंपरा से दु:खों की परंपरा का सर्जन होता है ।

उत्सर्पिणी काल :- जिस काल में उत्तरोत्तर शुभ पुद्गलों की वृद्धि तथा अशुभ पुद्गलों की जानहानि होती है, वह काल उत्सर्पिणी काल कहलाता है । इस कालखंड में देह, बुद्धि, बल, आयुष्य, कांति, पृथ्वी आदि की रसप्रचुरता में तथा सारभूत उत्तम पदार्थों के गुण में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है ।

(1) दु:षम दु:षम :- 21,000 वर्ष की कालमर्यादा वाला यह आरा लगभग अवसर्पिणी के छट्ठे आरा के समान होता है । इसमें विशेषता इतनी ही है कि अवसर्पिणी काल की अवधि में देह, आयुष्य, आहार आदि में उत्तरोत्तर ह्रास होता है । जब यहाँ उन सभी में क्रमश: वृद्धि होती जाती है ।

(2) दु:षम :- कालमान 21,000 वर्ष । इस आरा में भरतक्षेत्र मे पाँच प्रकार की वृष्टि होती है । जिससे धरती की उष्णता नष्ट होती हैं, दुर्गंध दूर होती है और धरती में स्निग्धता पैदा होती है । 24 प्रकार के धान्य की उत्पत्ति होती हैं । वनस्पति में रस प्रचुरता पैदा होती है । समय के साथ साथ बिलवासीओं में भी परिवर्तन के लक्षण शुरू होते हैं । वे फल आदि का आहार लेते हैं । वह स्वादिष्ट लगने से मांसाहार का त्याग करते हैं । बुद्धि का आविर्भाव होता है । अवसर्पिणी के पाँचवे आरा जैसे रीत-रिवाज फिरसे 'शुरू' होते हैं ।

(3) दुःषम दुःषम :- कालमान 42,000 वर्ष न्यून । कोडाकोडी सागरोपम । अवसर्पिणी के चौथे आरा की तरह यहाँ भी है । शुरूआत में 3 वर्ष और 8.1/2 मास होने के बाद प्रथम तीर्थंकर भगवान का जन्म होता है । उत्तरोत्तर 23 तीर्थंकर, 9 बलदेव, 9 वासुदेव, 9 प्रतिवासुदेव इस काल में होते हैं । वर्णादि शुभ पर्यायों-की उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है ।

(4) सुषम दुःषम :- 2 कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण, अवसर्पिणी के तीसरे आरा जैसा ही यहाँ भी होता है । 84 लाख पूर्व, 3 वर्ष और 8.1/5 मासपे 24 वे तीर्थंकर का मोक्षगमन होता है । उसके बाद 12 वे चक्रवर्ती का आयुष्य पूर्ण होता है । उसके बाद क्रोड पूर्व काल व्यतीत होने के बाद कल्पवृक्ष की उत्पत्ति होती है । कल्पवृक्ष के प्रभाव से मनुष्य और वनचरों की इच्छाएँ पूर्ण होती है । बादर अग्नि तथा धर्म का विच्छेद होता है । इस तरह अकर्म भूमि जैसा क्षेत्र हो जाता है ।

(5) सुषम :- 3 कोडाकोडी सागरोपम- कालमान, अवसर्पिणी के दूसरे आरा जैसा ही है ।

(6) सुषम सुषम :-4 कोडाकोडी सागरोपम प्रमाण, अवसर्पिणी के प्रथम आरा की तरह यहाँ कालखंड हैं ।

ऐसे अवसर्पिणी काल के 10 कोडाकोडी सागरोपम और उत्सर्पिणी काल के 10 कोडाकोडी सागरोपम वर्ष मिल के 20 कोडाकोडी सागरोपम वर्ष का एक कालचक्र होता है । अवसर्पिणी के 9 कोडाकोडी तथा उत्सर्पिणी के 9 कोडाकोडी कुल 18 कोडाकोडी सागरोपम काल तक 5 भरत और 5 ऐरावत क्षेत्र धर्मरहित होते हैं । महाविदेह क्षेत्र में हमेशां धर्म होता है ।

ऐसे अनंता कालचक्रों का 1 पुद्गल परावर्त काल होता है ।

B. छः लेश्या की पहचान :-
जंबु वृक्ष (जामुनवृक्ष) तथा चोर का दृष्टान्त ।

'लेश्या' - ये जैनदर्शन में प्रसिद्ध पारिभाषिक शब्द हैं । कायायोग अंतर्गत कृष्ण द्रव्य के संबंध से उत्पन्न होते आत्मा के परिणाम विशेष को लेश्या कहते हैं । स्फटिक रत्न के छिद्र में जैसे रंग का धागा उतारे (पिरोये) ऐसे रंगवाला रत्न दिखे, ऐसे आत्मा में अच्छा-बुरा भाव लेश्या को उत्पनन करनेवाला जो योगान्तर्गत

पुद्गल द्रव्य-वही द्रव्य लेश्या । जीस प्रकार के लेश्या द्रव्य उद्भवते हैं, उस प्रकार का आत्म परिणाम होता है । उपचार से उसे द्रव्य लेश्या भी कहा जाता है ।

लेश्या के छः प्रकार हैं : (1) कृष्ण (2) नील (3) कापोत (4) तेजो (5) पद्म (6) शुक्ल ।

ये प्रत्येक द्रव्य लेश्याएँ उनके नाम अनुसार वर्णवाली होती है । जैसे वर्णवाली लेश्या आत्मा में भी ऐसे ही तीव्र, मन्द, शुभाशुभ अध्यवसाय को उत्पन्न करती हैं ।

लेश्या का स्वभाव (1) कृष्ण लेश्यावाला जीव वैर से निर्दय, अतिक्रोधी, भीष्ण मुखवाला, तीक्ष्ण कठोर, आत्मधर्म से विमुख और वर्धकृत्य करनेवाला होता है । (2) नील लेश्यावाला जीव माया, दंभ में कुशल, लांचलेनेवाला, चपल(चंचल) चित्तवाला, अति विषयी और मृषावादी होता हैं । (3) कापोत लेश्यावाला जीव मूर्ख, आरंभ मग्न, सर्व कार्य में पाप नहीं गिननेवाला, लाभालाभ नहीं गिननेवाला और क्रोधी होता है । (4) तेजो लेश्यावाला जीव दक्ष, कुशल, कर्म को रोकनेवाला, सरल, दानी, शीलयुक्त, धर्मबुद्धिवाला और शांत होता हैं । (5) पद्म लेश्यावाला जीव प्राणी पर अनुकंपावाला, स्थिर, सर्वजीव को दान देनेवाला, अति कुशल बुद्धिवाला, सर्व कार्य में पाप दूर करनेवाला, हिंसादि पापो में अरुचिवाला और दुगुर्णो प्रति अपक्षपाती होता हैं ।

इस विषय की ज्यादा स्पष्टता के लिए शास्त्रो में (1) जंबुवृक्ष और चोर का दृष्टान्त दर्शाया गया है । मार्ग से भूले पड़े 6 पुरुष किसी जंगल में आ गये । वहाँ भूखे हुए 'वे' चारों ओर भोजन के लिए दृष्टि कर रहे हैं । जामुन से लचे हुए एक विशाल 'जंबूवृक्ष' (जामूनवृक्ष) उनकी दृष्टिमें आया और वहाँ पहुँच गए । उनमें से एक ने कहा कि वृक्ष को मूल में से उखेड दें, कि जिससे सूखपूर्वक बैठे बैठे आराम से संतोषपूर्ण जामून का भोजन कर सकें । इस तरह जामून के लिए मूल में से वृक्ष उखेडेने का क्रूर(अतिकाला) परिणाम कृष्ण लेश्या है । इस तरह संसार में अपने क्षुद्र लाभ को प्राप्त करने के लिए अन्य के प्राण की परवा किये बिना जो ज्यादा संहार का विचार करते हैं उस अति स्वार्थान्ध जीव को कृष्णलेश्यावाले समझना ।

(2) तब दूसरे पुरुषने कहा कि क्यों इतना बड़ा वृक्ष नष्ट करें ? उसकी हमें जरूरत नहीं । बड़ी बड़ी शाखाएँ काट डालें और बादमें संतोषपूर्ण जामून खायें । क्षुद्र ऐसे जामुन के लिए वृक्ष के महत्त्व के अंगरुव बड़ी बड़ी शाखाओं को जमीनदोस्त करने का विचार नील लेश्या है ।

(3) तब तिसरे पुरुषने कहा कि फिर से ऐसी डालियाँ कब ऊगेगी ? इसलिए छोटी छोटी डालियाँ तोडें । क्योंकि डालियाँ फल से भरी है । उसको काटकर आराम से जामुन खा सकेंगे । ऐसा विचार कापोत लेश्या गर्भित है । संसार में भी अपने स्वार्थ के लिए अन्य को होनेवाले छोटे नुकसान का विचार किये बिना प्रवर्त करनेवाले स्वार्थी जीव कापोत लेश्या का दृष्टान्त है ।

ये तीन लेश्याएँ शास्त्र में अशुभ गिनी जाती है । जैसे उनके वर्ण अशुभ हैं, वैसे रसगंधादि भी अशुभ जानना ।

(4) चौथा पुरुष कहता है, हमें सिर्फ जामुन खाने हैं, इसमें वृक्ष की डालियाँ काटने की क्या जरूर ? सिर्फ बड़े जामुन के गुच्छे तोड लें और अपना काम पूर्ण कर लें । ऐसा विचार तेजो लेश्या से गर्भित है । संसार में भी अपने स्वार्थ के लिए अन्य को अति भारी या मध्यम नुकशान न हो ऐसी चिंता रखनेवाले जीव तेजोलेश्यावाले हैं ।

(5) पाँचवे पुरुषने कहा कि हमें गुच्छे से कोई भी प्रयोजन नहीं है लेकिन पक्के जामून के साथ प्रयोजन है । इसलिए फल को चून लें । ऐसा विचार पद्मलेश्या के परिणाम रूप है । संसार में जो जीव अपने स्वार्थ के लिए अन्य के जानमाल को नुशकान न हो उसकी चिंता रखनेवाले होते हैं । वे पद्मलेश्या का दृष्टान्त है ।

(6) छठ्ठे श्रेष्ठ मतिवाले पुरुषने इस प्रकार शिख (शिक्षा, उपदेश) दे कर कहा कि भूमि पर पड़े फल खाकर भी तृप्ति पाई जा सकती है । विशेष फल तोड़ने का पाप न लगे, ऐसा विशुद्ध विचार शुक्ल लेश्या गर्भित है । संसार में भी अपने प्रयोजन सिद्ध करने के लिए अन्य को लेशमात्र नुकशान न पहुँचे और अपना काम हो ऐसा अध्यवसायवाले जीव होते हैं । उन्हें शुक्ल लेश्या का दृष्टान्त जानना ।

तेजो, पद्म, शुक्ल ये तीन लेश्या ज्यादा या अल्प मात्रा से अन्य को नुकशान न हो ऐसी सावधानी या सर्वथा नुकशान न पहुँचे ऐसी सावधानीवाली होने से

उनको शुभ गिनी जाती है । कापोत, नील, कृष्ण लेश्या में अध्यवसाय ज्यादा से ज्यादा कठोर और मलिन बनते जाते हैं । जब तेजो, पद्म, शुक्ल लेश्या में अध्यवसाय ज्यादा से ज्यादा कोमल और शुद्ध बनते जाते है । इस दृष्टान्त से विश्व में रहे हुए समस्त जीवों के शुभाशुभ अध्यवसायों की कोमलता और कठोरता का माप निकाल सकते हैं ।

लेश्या को समजने के लिए दूसरा चोर का दृष्टान्त

पराक्रम में कुशल कई चोर किसी गाँव पर डाकाजनी (धाड़) करने निकले । मार्ग में जाते परस्पर इस प्रकार सोचने लगे । (1) वहाँ दुष्ट आत्मा(वाले) एक चोरने कहा कि जो कोई अपनी नज़र में आये-पुरुष, स्त्री, बालक, पशु-जानवर जो हो उन सभी की कत्ल कर दें और धन ले लो। यह अति क्रूर-कठिन अध्यवसाय परिणाम कृष्ण लेश्या रूप है । (2) तब दूसरे चोरने कहा कि जानवरोंने हमारा कोई भी अपराध किया नहीं इसलिए जिन के साथ हमारा विरोध है ऐसे सर्व मनुष्यों की कत्ल करना । (3) तब तिसरे चोरने कहा कि स्त्रीयों की हत्या मत करना क्योंकि वह अति नींदनीय है । लेकिन पुरुषों की ही कत्ल करना क्योंकि पुरुष क्रूर चित्तवाले होते हैं । ऐसा मंद क्रूर अध्यवसाय वह कापोत लेश्या है । (4) चौथे चोरने कहा कि सभी पुरुषों का भी वध मत करना । सिर्फ शस्त्रधारी पुरुष हो उसका ही वध करना । यह अध्यवसाय में पहले (पूर्व) से कोमलता है । लेकिन बहुत अल्पमात्रा में है । यह तेजो लेश्यारूप है । (5) तब पाँचवे चोरने कहा कि शस्त्रवाले हो कींतु भाग जानेवाले पुरुष की हत्या करने से हमें क्या फल मिलनेवाला है ? इसलिए चाहे शस्त्रवाला हो पर जो पुरुष हमारे साथ युद्ध करें उसकी ही हत्या करना । चौथे से पाँचवे में कोमलता थोड़ीसी ज्यादा है, यह पद्म लेश्या रूप है । (6) तब छठ्ठे चोरने कहा कि एक तो पराया धनमाल लूँटना यही पाप है और दूसरा अगर हत्या रूप जो बड़ा पाप करेंगे तो अपनी क्या गति होगी ? हमें मात्र धन चाहिए वही खींच लेना, किसीको मारने की जरूरत नहीं । इस अध्यवसाय में ज्यादा कोमलता होने से वह शुक्ल लेश्या रूप है ।

शास्त्र में कहा है कि मरते वक्त जो लेश्या होती है वही लेश्या की प्रधानतावाले भव में पुनर्जन्म होता है ।

अल्प, बहुत्व: शुक्ल लेश्यावाले जीव सर्व से अल्प है । उससे पद्मलेश्यावाले असंख्य गुना है । उससे तेजो लेश्यावाले असंख्य गुना है । उससे कापोत लेश्यावाले अनंतगुना है । उससे नील लेश्यावाले विशेषाधिक है । उससे भी कृष्ण लेश्यावाले विशेषाधिक है । लेश्या में मन-वचन-काया के योग मूल कारण है । इसलिए जब तक योग का सद्भाव होता है तब तक ही लेश्या का सद्भाव होता है । और चौदवें गुणठाणे के योग के अभाव से लेश्या का भी अभाव है ।

C. जीव-विचार भाग - 2

सचित अचित की समझ

एकेन्द्रिय में विशेष : पृथ्वी आदि के जो कोई उदाहरण दिये हैं वे सभी बादर पर्याप्ता के ही हैं ।

सूक्ष्म में अपर्याप्ता को आश्रयी को सूक्ष्म पर्याप्ता जीव रहते हैं ।

बादर में पर्याप्ता को आश्रयी को बादर अपर्याप्ता जीव रहते हैं ।

Que. पानी उबालकर पीना चाहिए । परंतु उबालने से तो जीव मरते हैं ।

Ans. पानी में काल-काल पे जीव उत्पन्न होते हैं । और मरते हैं ये क्रिया सतत कच्चे पानी में सतत ही चालु रहती है । पानी को उबालने से एक बार वे जीव मर जाते हैं । बाद में उसके काल के हिसाब से उस पानी में जीव उत्पन्न होते नहीं है । वह पानी अचित रहता है । इसलिए पानी उबालकर पीना चाहिए ।

दोइंद्रिय : शंख, पिल्लू, केंचुआ, कृमि, पोरा आदि दोइंद्रिय 22 अभक्ष्य में लगभग सभी में असंख्य दोइंद्रिय जीवों की उत्पत्ति होने से अभक्ष्य बनते हैं ।

नियम : 1) मधु, मक्खन, मदिरा, मांस ये चारों महाविगइ है । इसलिए उसका सर्वथा त्याग करना ।

2) हिम, बर्फ का त्याग करना ।

3) मेथीवाले सभी आचार और शास्त्रीय पद्धतिसे न किये हों ये सभी आचार का त्याग करना ।

4) द्विदल का त्याग करना । दहलन के साथ कच्चे दूध-दहीं-छाछ का उपयोग नहीं करना ।

5) रात्रिभोजन तथा बहुबीज का त्याग करना । हरे तथा सूखे अंजीर,

बैंगन, खसखस, रजगीर, आदि बहुबीज है ।

6) ब्रेड, आदि चीज, काल होने के बाद का आटा, मिठाई, खाखरा, चाट, आदि अभक्ष्य है । इसमें ऐसे ही रंग के दोइंद्रिय जीव उत्पन्न होते हैं इसलिए उनका उपयोग न करें ।

बाइस अभक्ष्य के उपयोग से होते नुकसान : वे आरोग्यनाशक, सत्त्वनाशक, बुद्धिनाशक है । उनसे त्रस, स्थावर, जीवों का संहार होता है । तामसी और क्रूर प्रकृति उत्पन्न होती है ।

तेइन्द्रिय : जूँ, चींटी, धनेरे, कानखजूरे, खटमल, दीमक, धान्य के कीड़े, गोबर के कीड़े आदि तेइन्द्रिय जीव हैं ।

नियम 1) कोइ भी धान्य का चालकर (छानकर) उपयोग करना, सड़े धान्य में हुई जीवात की देखभाल जयणापूर्वक करना (ठंडी जगा में रखना) ।

2) धान्य में कीड़े पड़ने के बाद धूप में नहीं रखना । पहले से ही धूप में रखना । इस तरह खाट, गद्दे, रजाई, आदि में खटमल या अन्य जीव होने से पहेले धूप में रखकर उपयोग करना, घर में सफाई रखना जिससे चींटी आदि न हो ।

तेइन्द्रियकी पहचान – उनको 4 या 6 पाँव होते हैं और आगे मूँछ जैसा भाग होता है । लगभग छोटी पंख होती है ।

नियम : 1) घर साफ़ रखें जिससे ये जीव उत्पन्न न हो ।

2) वे मर जायें ऐसी दवा घर में नहीं छिड़कना ।

सर्व स्थान पे बैठते या कुछ लेते-रखते विकलेन्द्रिय जीवों की रक्षार्थे नजर में आये दृष्टि पडिलेहण अवश्य करना । कोई जीव हो तो उसे बचाना ।

उपरोक्त दोइन्द्रिय, तेइंद्रिय, चउरिन्द्रिय को विकलेन्द्रिय भी कहलाते हैं । ये तीनों के पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे दो भेद होने से 3X2=6 भेद ।

ध्यान रखिए कि एकेन्द्रिय से चउरिन्द्रिय तक के सभी जीव समूर्च्छिम् और तिर्यंच हैं ।

समूर्च्छिम् पंचेन्द्रिय तिर्यंच ये जीव गर्भज तिर्यंच के जैसे ही दिखते हैं । भैंस, सिंह, आदि समूर्च्छिम् भी होते हैं । और गर्भज भी होते हैं । जैसे कि एकबार एक महाराज साहब 14 पूर्व पढ़ा रहे थे, उसमें वर्णन आया है कि अमुक औषधियाँ

मिश्रित करने से कई ज्यादा मछलियाँ पैदा होती है । यह बात एक मच्छी मारने सूनी और हररोज औषधियाँ इकठ्ठी करके बहुत मछलियाँ उत्पनन करके बेचने लगा । इस तरह वह बहुत धनवान बन गया । एक बार महाराज साहब का उपकार याद करके उनको भेंट(उपहार) देने गया । जब महाराज साहब को यह बात की जान हुई तब उन्होंने हिंसा की परंपरा रोकने के लिए मच्छीमार को कहा कि अमुक औषधियाँ इकठ्ठी करने से इससे भी ज्यादा अच्छी मछलियाँ बनेगी । मच्छीमारने घर जाकर प्रयोग किया । तो इनसे सिंह उत्पन्न हुआ और मच्छीमार को खा गया । ऐसे औषधि के मिश्रण से जो मछलियाँ तथा सिंह बनें वे सभी वास्तव में जीव थे लेकिन समूर्च्छिम जाति के थे ।

समूर्च्छिम् मनुष्य-समूर्च्छिम् मनुष्य गर्भज मनुष्य के जैसे नहीं दिखते । उनको पाँच इन्द्रियाँ होती है । लेकिन उनका शरीर बहुत ही छोटा (अंगूलि के असंख्य भाग प्रमाण) होने से एक साथ असंख्य उत्पन्न होने से वे नहीं दिखाई देते । उनका आयुष्य अंतमुहूर्त का ही होता है । वे गर्भज मनुष्य के 14 अशुचि स्थानो में उत्पन्न होते हैं । वे अपर्याप्त ही होते है ।

मनुष्य के 14 अशुचि स्थान (1) विष्टा (2) मूत्र (3) कफ-थूँक (4) नाक की मैल (5) वमन (6) जूठा पानी या भोजन (7) पित्त (8) लहू (9) वीर्य (10) वीर्य के सूखे पुद्गल गीले होने से तथा शरीर से अलग रखे गए गीले-पसीनवाले कपड़े में (11) रसी (12) स्त्री-पुरुष के संयोग में (13) नगर की बड़ी गटरों में (14) मनुष्य के शव में ।

मनुष्य के शरीर से अलग हुए ये 14 स्थानो में 48 मिनट के बाद असंख्य समुर्च्छिम् पंचेन्द्रिय मनुष्य उत्पनन होते हैं । पैदा होते हैं, मरते रहते हैं ।

इन जीवों की रक्षा करने के लिए ये अशुचि पदार्थोंकी सही जयणा करनी चाहिए ।

जयणा के लिए नियम :

1) जूठे बर्तन 48 मिनट में धो लेना ।
2) उबला हुआ गरम पानी ठंडा हुआ है वह देखने के लिए अंदर हाथ नहीं डालना लेकिन बाहर से थाली देख लेना ।
3) थाली धोकर पी लेना और पौंछकर रखना ।

4) कपड़े उतारकर पिंडा बनाकर स्नानगृह (Bathroom) में नहीं रखना । पसीनेवाले कपड़े सूखा देना ।

5) कपड़े 48 मिनट से ज्यादा भीगो के नहीं रखना ।

6) रसोईघर (kitchen) में डिब्बें आदि को भीगे या ऐसे वैसे हाथ लगे हो तो बराबर पौंछ लेना ।

7) मल-मूत्र के लिए शक्य हो तो बाहर खुली जगा में जाना ।

8) कफ या थूँक आदि को राख या धूल में मिला देना या कपड़े में लेकर मसलना ।

गर्भज, तिर्यंच, पंचेन्द्रिय की जयणा के लिए नियम :-

कुत्ते, बिल्ली, चूहा, साप, सूअर, चिड़ियाँ, मुर्गे, गाय, भैंस आदि की हिंसा न हो उसकी दरकार लेना । उनके मांस, हड्डियों से मिश्रित टूथपेस्ट आदि चीजें उपयोग में नहीं लेना । फेशन की भी कई चीजें लिपस्टीक आदि इन जीवों की हिंसा में से बनते हैं । इसलिए उनका उपयोग मत करना ।

गर्भज मनुष्य-एक बार पुरुष के साथ संयोग होने के बाद स्त्री की योनि में ९ लाख पंचेन्द्रिय मनुष्य, 2 से 9 लाख विकलेन्द्रिय तथा असंख्य समूर्च्छिम् जीवों की उत्पत्ति होती है । इसलिए ज्यादा से ज्यादा ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए ।

नियमो :- तिर्यंच, पंचेन्द्रिय या मनुष्यों को बाँधना नहीं, वध करना नहीं, गालियाँ देना नहीं, नौकर आदि के पास ज्यादा काम कराना नहीं । बन सके इतनी एक दूसरे को मदद करना, धर्म पमाडना, बच्चों को बचपन से ही अच्छे संस्कार देना । घर में सास-बहु, देवरानी, जेठानी, नणंद, आदि को एक-दूसरे को 'सुनाना' नहीं, झगड़े करना नहीं, मानसिक त्रास हो ऐसा वर्तन मत करना, बच्चों को ज्यादा पीटना नहीं, जुठे लाड़-प्यार मत करना ।

563 भेद की विविध-दृष्टि से जीवों की विचारणा

तिर्च्छालोक में संज्ञि - 16 व्यंतर + 16 वाणव्यंतर + 20 ति. जृ- + 20 ज्यो. + 202 मनु. + 10 त्ति = 284

तिर्च्छालोक में संज्ञि पं. पर्याप्ता - 8 व्यं. + 8 वाणव्यं. + 10 ति. जृ. + 10 ज्यो + 101 मनु. + 5 ति = 142

तिर्च्छालोक में संज्ञि पं. अपर्याप्ता - 8 व्यं + 8 वाणव्यं + 10 ति. जृ. + 10 ज्यो. + 101 म. + 5 ति = 142

ढाईद्विप में संज्ञि - 202 + 10 = 212, पर्या - 106, अपर्या - 106

उर्ध्वलोक में संज्ञि-24 देव + 6 किल्वि + 18 नव लोकांतिक + 18 नव ग्रैवयेक + 10 अनु. = 76.

उर्ध्वलोक में संज्ञि पर्याप्ता- 12 देव + 3 किल्वि + 9 लोकां. + 9 ग्रैवे. + 5 अनु. = 38.

उर्ध्वलोक में संज्ञि अपर्या.- 12 देव + 3 किल्वि + 9 लोका. + 9 ग्रैवे + 5 अनु = 38.

अधोलोक में संज्ञि-20 भवन + 30 परमा + 14 नरक = 64

अधोलोक में संज्ञि अपर्या- 10 भवन + 15 परमा + 7 नरक = 32

कुल संज्ञि = 284 + 76 + 64 = 424

तिर्च्छालोक में असंज्ञि-22 एके. + 6 विकले + 101 म + 10 ति = 139

तिर्च्छालोक में पर्या.-11 एके + 3 विक. + 5 ति. = 19

तिर्च्छालोकमां अपर्या.-11 ऐके + 3 विक. + 101 म. + 5 ति. = 120

कुलपर्याप्ता = 142 + 38 + 32 + 19 = 231

कुलपर्याप्ता= 142 + 38 + 32 + 120 = 332

= 563

त्रस नाडी की बाहर 10 सूक्ष्म + 2 बा. वाउ. + 2 बा. पृ. (नरक पृ.) + 2 बा अप्(धनादधि) + 2 बा.सा. वन = 18

इन्द्रिय संबंधी विचारणा

एकेन्द्रिय-22, बेइन्द्रिय -2, तेइन्द्रिय-2, चउरेन्द्रिय-2, पंचेन्द्रिय-535=563

निम्न स्थान में कितने जीव भेद है ?

सूइ की नोक पर 12 जीव भेद, गीले हाथ की मुठ्ठी में - 14 जीव भेद

14 राजलोक में सर्वत्र — 10 सूक्ष्म +2 बादर वाउ = 12 ·

विविध चीजों में जीवभेद की विचारणा

जगत में नज़र में आनेवाली लगभग हरेक चीज जीवों के सचित्त या अचित्त

ACHARY

Koba Gandhinagar-382007.

शरीर की ही बनी हुई है । जिससे कौन सी चीज सचित, अचित या कौन से जीवभेद से बनी है उस विषय की बारबार विचारणा करने से ही सचित्त पदार्थों में जयणा कर सकें ।

निम्न पदार्थ सचित-अचित या कौन से जीवभेद है उसकी विचारणा

	चीज	सचित्त जीवभेद	अचित्त जीवभेद
1.	टयुब लाइट का प्रकाश	बा.तेउ.पर्या.	-
2.	टेबल	-	बा.पर्या. प्रत्येक वन.
3.	छड़ (धातुका), सीखया	-	बा.पर्या. पृथ्वी
4.	सूती कपड़े (Cotton Clothes)	-	बा.पर्या. प्र.वन.
5.	48 मिनट से ज्यादा समय शरीर से अलग रहे पसीनावाले वस्त्र	समू.पंचे. मनु.	-
6.	शत्रुंजय पर्वत	बा.पर्या. पृथ्वी	-
7.	आलु	पर्या.बा.सा. वनस्पति	-
8.	मरी हुई मक्खी को चींटी ले जाती है	पर्या. तेइ.	पर्या. चउ.
9.	सोने के चैन	-	पर्या. चउ.
10.	चरवला की दशी	-	पंचे.पया./सम. तिर्यंच
11.	स्थापनाचार्यजी (साधु-साध्वीके)	-	बेइ. पर्या.
12.	कच्चे पानीवाली जूठी थाली समू.मनु. तथा बा. पर्या. अप.	-	
13.	मकान	-	बा.पर्या. पृथ्वी

563 भेदवाले जीवों की दस प्रकार की विराधना से निम्न प्रकार से रोगोत्पत्ति की संभावना इस प्रमाण से कहलाती है ।

जीव आराधना

अभिहया	लात मारना	घूटन संबंधी रोग
वत्तिया	धूल से ढँकना	श्वास तथा घुटन संबंधी रोग
लेसिया	भूमि के साथ रगडना	कुष्ठ आदि चमड़ी के दर्द

संघाइया	इकट्ठे करना	धक्का-मुक्की या भीड़ में आना-जाना पड़े
संघट्टिया	स्पर्श से दु:ख देना	चर्मरोग, मलेरिया, बुखार आदि
परिआविआ	थकाकर बेहोश करना	T.B.
किलामिआ	कष्ट देना	Aids,, केन्सर
उदविया	भयभीत करना	मानसिक बिमारी, टेन्शन, आदि
ठाणाओ, ठाणं संकामिया	स्थानांतर कराना	जगा विषे प्रोब्लेम रहना, एडमीशन न मिले
जीवीआओ ववरोविया	प्राण से रहित करना	आकस्मिक मरण हो जाय

जीवों की अवगाहना (शरीर प्रमाण) और आयुष्य

जीव	अवगाहना	आयुष्य
पृथ्वी	अंगुल का असंख्यातवा भाग	22,000 वर्ष
अप	अंगुल का असंख्यातवा भाग	7,000 वर्ष
तेउ	अंगुल का असंख्यातवा भाग	
वायु	अंगुल का असंख्यातवा भाग	3,000 वर्ष
प्रत्येक वन	साधिक 10,000 योजन	10,000 वर्ष
साधा. वन.	अंगुल का असंख्यातवा भाग	अंत मुहूर्त
बेइन्द्रिय	12 योजन	12 वर्ष
तेइन्द्रिय	3 गाउ	49 दिन
चउरिन्द्रिय	1 योजन	6 मास

तिर्यंच पंचेन्द्रिय	गर्भज शरीर	आयुष्य	समुर्च्छिम् शरीरमाप	आयुष्य
जलचर	1,000 योजन	क्रोड पूर्व आयु.	1,000 योजन	क्रोड पूर्व वर्ष
उरपरिसर्प	1,000 योजन	क्रोड पूर्व आयु.	2-9 योजन	53,000 वर्ष
भूजपरिसर्प	2-9 कोस	क्रोड पूर्व आयु	2-9 धनुष्य	42,000 वर्ष
चतुष्पद	6 कोस	3 पल्योपम	2-9 कोस	84,000 वर्ष
खेचर	2-9 धनुष्य	पल्य का असंख्य भाग	2-9 धनुष्य	72,000 वर्ष

प्रत्येक वन में कमल की नाल 1,000 योजन के पानी के अंदर होती है । मनुष्य लोक की बाहर 12 योजन के शंख आदि दोइन्द्रिय (बेइन्द्रिय), 3 कोष के कानखजूरे आदि तेइन्द्रिय, 1 योजन के भँवरे आदि चउरिन्द्रिय होते हैं । तिर्यंच पंचेन्द्रिय उत्कृष्ट माप से स्वयंभूरमण समुद्र में / सर्व छिपकली-पक्षी आदि ढाई द्वीप की बाहर, हाथी देवकुरु-उत्तरकुरु में होते हैं ।

मनुष्य गर्भज

अवसर्पिणी	उत्सर्पिणी	कर्मभूमि	अकर्मभूमि	शरीर	आयुष्य
1	6	भरत-ऐरावत	देवकुरु-उत्तरकुरु	3 कोस	3 पल्योपम
2	5	भरत-ऐरावत	हरिवर्ष-रम्यक्	1 कोस	2 पल्योपम
3	4	भरत-ऐरावत	हिमवंत-हैरण्यवंत	1 कोस	1 पल्योपम
4	3	महाविदेह-भरत-ऐरावत	—	500 धनु.	क्रोड पूर्व
5	2	भरत-ऐरावत	—	3 हाथ	130 वर्ष
6	1	भरत-ऐरावत	—	1 हाथ	20 वर्ष

संमूर्च्छिम् अपर्याप्ता मनुष्य के आयु. अंतमुर्हत

देव	आयुष्य	देवी का आयुष्य
भवनपति	-	-
असुरकुमार	1 सागरोपम से अधिक	41/2 पल्योपम
बाकी व 9 निकाय	न्यून पल्योपम	न्युन -1 पल्योपम
व्यंतर	1 पल्योपम	आधा 1/2 पल्योपम
ज्योतिष-चंद्र	1 पल्योपम + 1 लाख	आधा 1/2 पल्योपम
सूर्य	1 पल्योपम + 1000 वर्ष	आधा 1/2 पल्योपम
ग्रह	1 पल्योपम	आधा पल्योपम
नक्षत्र	1/2 आधा पल्योपम	साधिक 1/4 पल्योपम
तारा	1/4 पल्योपम	साधिक 1/8 पल्योपम

देव का जघन्य आयुष्य 10 हजार वर्ष । यहाँ तक का सर्व देवों का शरीर प्रमाण 7 हाथ ।

देव	आयुष्य	शरीरमान
वैमानिक 1-2	2 साग. अधिक	7 हाथ
3-4 वैमानिक	7 साग. अधिक	6 हाथ
5-6 वैमानिक	10 साग., 14 साग.	5 हाथ
7-8 वैमानिक	17 साग., 18 साग.	4 हाथ
9 थी 12 वैमानिक	19-20-21-22 साग.	3 हाथ
9 ग्रैवयेक	23 से क्रमशः 31 साग.	2 हाथ
5 अनुत्तर	31 से 33 साग.	1 हाथ

देवी	आयुष्य	देवी	आयुष्य
पहला देवलोक	पल्योपम	दूसरा देवलोक	पल्योपम
परिगृहीता	7	परिगृहीता	9
अपरिगृहीता	50	अपरिगृहीता	55

नारकी	शरीर-धनुष्य अंगुल	आयुष्य
1	73/4-6 अंगुल	उत्कृष्ट 1 साग.
2	151/2 - 12 अंगुल	3 साग.
3	31 1/4 धनुष.	7 साग.
4	62 1/2 धनुष.	10 साग.
5	125 धनुष्य.	17 साग.
6	250 धनुष्य.	22 साग.
7	500 धनुष्य.	33 साग.

प्रथम नरक का जघन्य आयुष्य 10 हजार वर्ष ।

दो से सात नरक के क्रमशः जघन्य आयुष्य उपर उपर से नरक के उत्कृष्ट आयुष्य मुजब जानना ।

प्राण द्वार

10 प्रकार के प्राण होते है ।

5 इन्द्रिय	= 5 प्राण-चमडी, जीभ, नाक, आँख और कान
मन, वचन, काया	= 3 बल
श्वासोश्वास	= 1
आयुष्य	= 1
	= 10 प्राण

कौन से जीव को कितने प्राण होते हैं -

एकेन्द्रिय को 4 प्राण होते हैं - 1 इन्द्रिय (चमड़ी), कायाबल, श्वासोश्वासो तथा आयुष्य ।

बेइन्द्रिय को उपर के 4 प्राण + जीभ + वचनबल = 6 प्राण

तेइन्द्रिय को उपरोक्त 6 प्राण + नाक = 7 प्राण

चउरिन्द्रिय को उपरोक्त 7 प्राण + आँख = 8 प्राण

असंज्ञि समूर्च्छिम् पंचेन्द्रिय को उपर के 8 प्राण + कान = 9 प्राण

संज्ञि पंचेन्द्रिय को उपर के 9 प्राण + मन = 10 प्राण

योनि द्वार

जीवों को उत्पन्न होने योग्य स्थान 84 लाख है । ये 84 लाख योनि में समान वर्ण-रस-गंध-स्पर्श-संस्थान वाली एक ही योनि गीनी जातीहै । उनको भी जो अलग अलग गिना जाय तो असंख्य योनियाँ बन जाती है ।

84 लाख योनियाँ इस प्रकार है -

07 लाख पृथ्वीकाय

07 लाख अप्काय(पानी)

07 तेऊकाय (अग्नि)

07 वाऊकाय (वायु)

00 लाख प्रत्येक वनस्पति काय

04 लाख साधारण वनस्पति काय

02 लाख बेइन्द्रिय

02 लाख तेइन्द्रिय
02 चउरेन्द्रिय
04 लाख देवता
04 लाख नारकी
04 लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय
14 लाख मनुष्य
कुल 84 लाख योनियाँ है ।

4. जैनाचार

A. नमस्कार (नवकार) मंत्र और पंचपरमेष्ठि

नमस्कार मंत्र - नवकार मंत्र, यह पंचपरमेष्ठि को नमस्कार करने का सूत्र है । यह सूत्र और सूत्र से किया गया नमस्कार महामंगलरूप है । सर्व विघ्नों को दूर करता है । और अचिंत्य सिद्धियाँ देता है । इससे सद्‌गति मिलती है । एवं नमस्कार करते वक्त परमेष्ठी के सुकृत तथा गुण प्रति अनुमोदना तथा आकर्षण रहता है । अनुमोदना उत्कृष्ट करें तो 'करण करावण ने अनुमोदन सरिखा फल नीपजायो' आकर्षण से सुकृत तथा गुण की सिद्धि करने की दिशा में पहला कदम आरंभ होता है ।

कोइ भी धर्म सिद्ध करने के लिए यह पहला सोपान है कि उसका आकर्षण खड़ा किया जाय, यह धर्मबीज है । बीज पर वृक्ष उगता है और उस पर फूल आते है । परमेष्ठी-नमस्कार में यह आकर्षण सक्रिय बनता है । अरिहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय और साधु ये पाँच परमेष्ठि हैं ।

(1) अरिहंत- ये पहले परमेष्ठी है; विचरते देवाधिदेव परमात्मा है । अरिहंत देवों की पूजा के अर्ह है - योग्य है, ये अरिहंत18 दोष के त्यागी और 12 गुणों से गुणवंत हैं । उनको ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय कर्म के नाश से क्रमश: अज्ञान, निद्रा, दानादि पाँच के अंतराय-ये 7 दोष तथा मोहनीय कर्म के नाश से 11 दोष मिथ्यात्व, राग, द्वेष, अविरति और काम - ये 5, और हास्य, शोक, हर्ष, उद्वेग, भय और जुगुप्सा(दुगंछा) ये 6 - इस तरह 5+6=11 और 7+11=18 दोष त्याग दिये हैं, इसलिए वीतरागी बने हैं ।

अरिहंत के 12 गुण - अरिहंत में 34 अतिशय यानि पुरुषोत्तमता-परमेश्वर की विशिष्टताएँ हैं । इनमें 4 मुख्य अतिशय और 8 प्रतिहार्यरूप अतिशय ऐसे 12 गुण अरिहंत के हैं । 4 अतिशय में 18 दोष का त्याग ये उनका 'अपायापगम' अतिशय है । (अपाय=दोष-अनर्थ-उपद्रव) वे जहाँ विचरते हैं वहाँ 125 योजन में मारी-मरकी, आदि उपद्रव दूर होते हैं । उनको भी 'अपायापगम-अतिशय' कहते हैं । वितराग बनने के बाद सर्वज्ञ बनते हैं । ये 'ज्ञानातिशय' है । वहाँ जघन्य से क्रोड देवता साथ रहते हैं, देवों, इन्द्रों पूजा भक्ति करते हैं आदि यह पूजातिशय

है । प्रभु 35 गुणवाली देशना दें, ये 'वचनातिशय' है । यह 4 मुख्य अतिशय हैं । साथ में 8 प्रातिहार्य गिनने से अरिहंत के 12 गुण कहलाते हैं । उनमें कुल 34 अतिशय (विशिष्ट चीज) उत्पन्न होती हैं । उसमें से एक भाग 8 प्रातिहार्य-सिंहासन, चामर, भामंडल-3, छत्र, अशोकवृक्ष, पुष्पवृष्टि, दिव्यध्वनि, देवदुंदुभि-8 है । ये उनके साथ रहते हैं ।

ये विशिष्टता उत्पन्न होने का कारण उन्हों ने (1) पूर्वभव में अरिहंत-सिद्ध-प्रवचन आदि पद पैकी एक या सभी पद (२० स्थानक) स्थानक की साधना (2) अत्यंत निर्मल सम्यग् दर्शन की उच्च कोटि की साधना और (3) संसार के कर्मपीडित सर्वजीवों का "मैं कैसे उद्धार करूँ" ऐसी करुणा भावना की वह है ।

अरिहंत बननेवाले जीवन में भी बड़ी राज्यवृद्धि, वैभवविलास, आदि को तिलांजलि देकर सर्व पाप प्रवृत्ति के त्यागरुप अहिंसादि के महाव्रत वे स्वीकारते हैं । बाद में कठोर संयम, तपस्या और ध्यान की साधना के साथ उपसर्ग परिषह को सहन करते हैं । इससे ज्ञानावरण आदि चार घाति कर्म का नाश करके वीतराग सर्वज्ञ बनते हैं । वहाँ पूर्व की प्रचंड साधना से उपार्जित तीर्थंकरपणा का पुण्य भी उदय में आता है और वे अरिहंत बनते हैं ।

अरिहंत धर्मशासन की स्थापना करते हैं । इसमें वे जगत को यथार्थ तत्त्व और मोक्षमार्ग देते हैं । तथा साधु-साध्वी-श्रावक-श्राविका ये चतुर्विध संघ स्थापित करते हैं । क्रमशः आयुष्य समाप्त होते बाकी के वेदनीय आदि अघाती कर्म का क्षय करके मोक्ष में पधारते हैं, तब ये सिद्ध बनते हैं । अरिहंत में 4 घाती कर्म के क्षय से चार गुण और सिद्ध में 4 घाती + 4 अघाती=8 कर्म के क्षय से 8 गुण होते हैं । तो भी अरिहंत प्रथम पदपे और सिद्ध दूसरे पदपे इसलिए है कि श्री अरिहंत के उपदेश से ही दूसरे भी भव्य जीव मोक्षमार्ग की आराधना करके सर्वकर्म क्षय करके सिद्ध होते हैं । इसलिए सबसे बड़े उपकारी होने से उनको पंचपरमेष्ठि पदमें प्रथम पदपे बिराजमान किया है ।

2. सिद्ध : सिद्ध दूसरे परमेष्ठी है । सिद्ध यानि कर्म से मुक्त, संसार से मुक्त आत्मा । अरिहंत न हो सके ऐसे आत्मा भी अरिहंत के उपदेशानुसार मोक्षमार्ग की साधना करके आठों कर्मों का नाश करके मोक्ष प्राप्त करते हैं । इसके बाद वे तद्दन शुद्ध, बुद्ध, निरंजन, निर्विकार, निराकार स्थिति प्राप्त करके लोक के उपर सिद्धशिला

पर शाश्वत काल के लिए स्थिर होते हैं । उनको सिद्ध परमात्मा कहते हैं । ऐसे सिद्ध-परमात्मा में अनंतज्ञान, अनंत दर्शन, वीतरागता, अनंत लब्धि, अव्याबाध अनंत सुख, अक्षय-अजर-अमर स्थिति, अरुपता और अगुरु लघुता - ऐसे 8 कर्मों के नाश से 8 गुण होते है ।

3 आचार्य : आचार्य तिसरे परमेष्ठी है । ये अरिहंत प्रभु की गेरमौजुदगी में साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकारुप चतुर्विध संघ के अग्रणी होते हैं । वे गृहवास और संसार की मोहमाया के सर्वबंधन त्याग कर मुनि बनके अरिहंत के बताये गए मोक्षमार्ग की साधना कर रहे हैं तथा जिनागमों का अध्ययन करके विशिष्ट योग्यता प्राप्त करके गुरु के पास से आचार्य पद प्राप्त करते हैं ।

आचार्य बनकर ये जगत में ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार का प्रचार करते हैं । और ये पंचाचारके पालन के साथ उद्यत (उद्यमी) बने हुए को शरण देकर पंचाचार का निर्मल पालन कराते हैं । 5 - इन्द्रियनिग्रह + 9ब्रह्मचर्य गुप्ति (वाड़) + 4 कषायत्याग + 5 महाव्रत + 5 आचार + 5 समिति + 3 गुप्ति = 36 गुण होते हैं । ऐसी 36-36 गुणों की 36 छत्रीसी है ।

4. उपाध्याय : उपाध्याय ये चौथे परमेष्ठी है । ये भी मुनि है । और जिनागम का अभ्यास करके गुरु के पास से उपाध्यायपद प्राप्त करते हैं । राजातुल्य आचार्य के ये मंत्री जैसे बनकर मुनिओं को जिनागम (सूत्र) का अध्ययन कराते हैं । उनमें आचारंगादि 11 अंग + 14 पूर्व (जो बारहवे दृष्टिमार्ग का एक संग्रह है) = 25 का पठन-पाठन होने से 25 गुण कहलाते हैं ।

5. साधु : साधु पाँचवे परमेष्ठी है । उन्हों ने मोहमाया भरे संसार का त्याग करके जीवनभर के लिए अहिंसादि महाव्रत स्वीकृत किये हैं । और वे पवित्र पंचाचार का पालन करते हैं । वे धर्मपालन में उपयोगी शरीर का टीकाऊपन माधुकरी भिक्षा से करते हैं । वह भी साधु के लिए नहीं बना हुआ, नहीं खरीद किया हुआ निर्दोष आहार ही ग्रहण करते हैं । इनमें भी दाता का भिक्षा देते समय पानी, अग्नि, वनस्पति आदि को साक्षात् (सीधा) या परंपरा से जरा सा भी स्पर्श न हुआ हो तो वे उनसे भिक्षा लेते हैं ।.... ऐसे तो कितने ही नियमों को वे अनुसरते हैं (आचरण करते हैं) ।

साधु संसार त्यागी होने से उनको घरबार नहीं होते । वे कंचनकामिनी के

सर्वथा त्यागी होते हैं, उनको स्पर्श भी नहीं करते । इतना उच्च अपरिग्रह और ब्रह्मचर्यव्रत पालते हैं । वे वाहन में बैठते नहीं । गाँव-गाँव पाँव से चलकर विहार करते हैं । और स्थिरता करें वहाँ साधुचर्या की आवश्यक क्रिया और ज्ञान-ध्यान में मस्त रहते हैं । दाढ़ी, मूछ, सिरके बाल की हजामत नहीं कराते लेकिन हाथ से उखेड़ देते हैं । लोगों को जीव-अजीव आदि तत्त्व तथा अहिंसा, सत्य, नीति, सदाचार, दान, शील, तप, शुभभावना, परोपकार आदि धर्म का उपदेश करते हैं ।

साधु के गुण 27-6 व्रतपालन, पृथ्वीकायादि 6, कायरक्षा - 5 इन्द्रियजय, 3 मनोवाक्काय-संयम - ऐसे 20, 21 क्षमा, 22- लोभनिग्रह, 23 - भाव विशुद्धि, 24 पडिलेहणादि में उपयोग, 25 - अनुष्ठान में रक्तता और 26-27 परिषह-उपसर्गसहन ।

यह पंच परमेष्ठी पैकी हरेक परमेष्ठी इतने पवित्र और प्रभावशाली है कि उनके बारबार स्मरण और नमस्कार से विघ्न दूर होते हैं, महामंगल होता है तथा चित्त को अनुपम स्वस्थता, तृप्ति और आध्यात्मिक बल मिलता है ।

पंच परमेष्ठि का स्मरण, नमस्कार, स्तुति, प्रशंसा, जप, ध्यान और लय सर्व कर्म का क्षय करके मोक्षपद देते हैं । अलबत् उसके साथ श्रावकता को उचित और साधुता को उचित आचार-अनुष्ठानों का पालन होना चाहिए ।

B. शरीर धर्म का साधन है तो आहार ये शरीर का साधन है । जैन शास्त्र, वैदक शास्त्र और आरोग्यशास्त्र की दृष्टि से आहारविधि ।

गणिवर्य श्री कल्याणबोधिविजयजी म.

पृथ्वीतल पर अवतार प्राप्त करनेवाला प्रत्येक जीव पेट लेकर ही जन्म लेता है । पेट के लिए खुराक चाहिए । पेट का खड्डा चाहे भले देढ़ फूट का दिखता हो लेकिन उसका कनेकशन कायमी है । मन अणु जितना है लेकिन उसका पेट आकाश को पकड़ ले ऐसा लगता है । अतृप्त मन के कारण पेट का खड्डा भरना मुश्किल बनता हैं । शरीर का केन्द्र-बिन्दु पेट है और पेट का आधार खुराक है । पेट ये कुदरत की देन है । लेकिन उसको कैसे भरना उसकी कला शीखने के लिए जिंदगी छोटी है-ऐसा है ।

आज का मानवी पेट को कचरापेटी समझ बैठा है । "बाबा बैठा जपे और जो आवे वो खाये" उस न्याय से हाथ लगे वह मुँह में डालने को होशियारी मानते हैं । पेट में पधराने के बाद उसका क्या परिणाम आयेगा ? उसका विचार करने का समय आज के मानव के पास नहीं है ।

कितने ही मानवों को टूकडे-टूकडे के लिए हाथ लम्बा करना पड़ता है । आकाश-पाताल एक करने पड़ते हैं । धन (अर्थ) की तरह आहार के विषय में भी यह सामाजिक असमतुला चिंतनीय है । सहित और रहित की यह तुला संतुलित होगी तो विश्ववस्था सुव्यवस्थित रहेगी । सुबह में उठकर कैसरिया दूध गटगटानेवाले को गाँव के या गरीब घरके बच्चें-कि जिनको दूध के बूँद का दर्शन सपने में भी दुर्लभ हो गया है-वे क्यों याद आते नहीं होंगे ? समाज का एक वर्ग आराम से आरोगता है । पेट फोड़कर खाता है । वे बिना भूख खाते रहते हैं । इसलिए दूसरे वर्ग को कण कण के लिए तलसने के दिन आते हैं ।

एकदा एक पहेलवान और एक क्षीणकाय इकट्ठे हो गए । पहेलवान ने क्षीणकाय की मज़ाक की कि यार ! तुझे देखकर ऐसा लगता है कि तू छप्पन के सूखा में से आया है । तुरंत क्षीणकायवालेने कहा कि तेरी बात सही है लेकिन तुझे देखकर छप्पन के सूखा का कारण अब समझ में आता है । एक पैसे की नोटें गिननेवाला और दूसरा भोजन करनेवाला दोनों समान से दिखते हैं । क्योंकि आदमी इस तरह खाता है कि जैसे दूसरे वक्त का भोजन वापस मिलनेवाला ही नहीं है ।

आहार प्रति अँधि आसक्तिने मानव को जानवरसे नीची भूमिका में रख दिया है । जानवर को भी मालूम होता है कि कब खाना और कब नहीं खाना । क्या खाना और क्या नहीं खाना इसके लिए उसे आदमी की तरह कोई युनिवर्सिटी में अभ्यास करने नहीं जाना पड़ता ।

सामान्य विचार करने से मालूम होता है कि, बालक को 'क्या खाना' वही सीखाया पड़ता है, और इससे उसका विकास बढ़ता है तब उसे 'क्या नहीं खाना' वही सीखाना पड़ता है । आजकल उसके लिए थोकबंध पाठ्ययुस्तक और साहित्य प्रकाशित हो रहा है । युनिवर्सिटीयों में उसका अभ्यास किया जाता है, तो भी शिक्षित मानव आहार की बाबत में पछात होता जा रहा है ।

खुराक के षट्रस होते हैं । ये षट्(छः) रस शरीर के दोषों के नाशक होते हैं । खुराक के षट्रस को सभी जानते हैं । आज हमें अपने खुराक के षइविष-छः प्रकार के ज़हर को विचार करना है । षड्विष छः गुणों का नाश करते हैं । पहचानो पेट को Dead करते और जीवन को ज़हर करनेवाले ये षड्विष को !

(1) अभक्ष्य खाना (2) अनीति का खाना

(2) अकाल पे खाना (3) अति खाना

(3) अँधकार में खाना (4) आसनरहित खाना

(1) अभक्ष्य न खाना : रशियन फिलोसोफर रुसो कहते हैं, "Man is a Rational Animal" मानवी बुद्धिमंत प्राणी हैं ।" वह बुद्धिशाली है तो भी खाने की बाबत में विवेकहीन है । पेट कैसा है - वह देखता नहीं है । वानगी कैसी है - सीर्फ वही देखता है । इसलिए धर्मशास्त्रोने मानव के लिए क्या खाने योग्य है और क्या नहीं खाने योग्य है - उसका सचोट बोध दिया है । जानवर विवेकहीन है तो भी पेट के अनुरुप-अनुकूल खुराक ही वे लेते हैं । वैदकशास्त्र पेट को स्वस्थ रखने के उपाय बताते हैं । तामसी खुराक मनको भी तामसी करता है । जमीनकंद-प्याज, आलू, मूले, गाजर-मन में विकृतियाँ पैदा करते हैं । मांसाहारी आहार शरीर के लिए तद्दन अनहाइजनीक है, इसलिए ये सब मानव पेट के लिए तद्दन वर्जनीय है ।

(2) अनीति का खाना : अनीति से मिला हुआ अन्न भी तन-मन-जीवन को खैदान-मैदान कर देता है । अन्न ऐसा मन, आहार ऐसी उ़कार ! अनीति के धन का एक दाना मनको विकृत कर देता है ।

● पूनिया श्रावक का मन एकदा सामयिक में लगता नहीं था । बहुत जाँच करने से अंत में खयाल आया कि पडोशी का उपला भूल से पत्नी द्वारा घरमें आ गया था । वह लौटा देने के बाद ही उसका चित्त स्वस्थ हुआ ।

● कुरुक्षेत्र के मैदान में ढलती संध्या पे युधिष्ठिर और दुर्योधन इकट्ठे हुअे । दुर्योधन कहता है - "युधिष्ठिर ! भीष्म पितामह हमारे पक्ष में है । वीर भड़वीर है तो भी अपना जुस्सा क्यों नहीं दिखाते ?"

युधिष्ठिरने कहा, "वे समजते है कि, भले में कौरवपक्ष में हूँ लेकिन सत्य तो पांडव पक्ष में ही है ।" इसलिए जोम नहीं आता । 'तो जुस्सा लाने का कोई

उपाय ?' "हाँ, कोई दुष्ट आदमी का अन्न जो उनके पेट में जायेगा तो ही उनका मन भ्रष्ट होगा और तो ही वे खूँखार बनकर लड़ सकेंगे । आजतक उनके पेट में अनीति के अन्नका एक दाना भी नहीं गया । इसलिए तन असत्य के पक्ष में होते हुए मन सत्य की बाजु में है ।" दुर्योधनने पूछा - "ऐसा दुष्ट इस दुनिया में कौन है ?" युधिष्ठिरने कहा, "तूँ ही ! तुजसे बढ़कर दूसरा कौन दुष्ट इस दुनिया में है ?" दुर्योधन खुश होता चल दिया । दूसरे दिन अपने अन्न का एक दाना भीष्मपितामह को मालूम न पडे इस रीत से उनकी थाली में रख दिया । उस दिन से भीष्म पितामह का तन-मन भ्रष्ट हो गया । आँखे होते हुए भी वे विवेकहीन बने । सत्-असत् का भान भूले । खुँखार होकर लड़े और पाँडवसेना का कच्चरघाण निकाल दिया ।

अनीति के अन्न का एक कण जनम-जनम बरबाद करने के समर्थ है । इसलिए 'हक से कमाओ', 'हक से खाओ' की नीति याद रखकर हराम का खाने की मनोवृत्ति छोड़ दो । पसीना गीराकर पेट भरनेवाला बीमार पड़े वह संभवित ही नहीं ।

(3) अकाल पे न खाना : वैदकशास्त्र शरीर को जीवन का सर्वस्व मानते हैं । धर्मशास्त्र शरीर को धर्म का साधन मानते हैं । इसलिए शरीर को तंदुरस्त रखने के लिए कब खाना यह महत्त्व का प्रश्न है । खाने के विषय में दोनों शास्त्र असंमत होंगे लेकिन काल के विषय में दोनों एकमत हैं ।

पौराणिक कथानुसार आदि मानव ब्रह्मा के पास जाता हैं । और जीवन टीकाने के लिए जानकारी माँगता है । ब्रह्मा कहते हैं - "एक बार खाना और तीन बार स्नान करना ।" याद करते करते आदिमानव रास्ते में जाता है । रास्ते में पथ्थर की ठेस लगने से मन इसमें जाता है । पंक्ति भूल जाता है, उल्टा हो जाता है । "तीन बार खाना और एक बार स्नान करना ।" तबसे तीनबार खाने की प्रथा चालु है । वास्तव में दशवैकालिक सूत्र में जैसे बताया है कि दिन में एक बार खाना वही योग्य है । पेट कमल जैसा है । उसको सूरज के साथ सीधा संबंध है । जैसे जैसे सूरज उपर आता है वैसे वैसे पेट का कमल खीलता है । इसलिए भोजन का काल मध्याह्न है । उसके सिवा सभी काल खुराक के लिए अकाल है । अकाल में खाया हुआ खुराक जहर में रूपांतरित हो जाता है । मध्याह्न पे एक बार व्यवस्थित सात्त्विक

आहार लेनेवाली व्यक्ति चिरायु बनती है, निरोगी बनती है और उसके शरीर का गठन मजबूत रहता है । 101 वर्ष के आयुष्यवाले भारत के सर एम. विश्वसरैया कहते है कि, "ज्यादा, तंदुरस्त और दीर्घायु होने के लिए जब भूख लगे तब खाओ !"

(4) अति न खाना : पेट कोमल है । उस पर अत्याचार न गुजारना । वानगीओं की वेराइटीझ (Varaties) देखकर कोई जीव अंध बन जाता है । दो-तीन दिन का इकट्ठा खा लेते हैं । बाद में जुलाब (diaria) हो जाता है । चूर्ण की गोली लेनी पड़ती है । डॉक्टर के पास या अस्पताल में जाना पड़ेगा । ईसका विचार नहीं करते ।

एक भाई : "साहेबजी ! वासक्षेप डाल दिजिए । आप के वासक्षेप का प्रभाव आज देखना है । क्यों ? क्या हुआ ? कल शादी में गया, स्वादिष्ट खमण ढोकले अच्छे लगने से खूब खा गया । पेट में गरबड़ जैसा दिखता है । ऐसा वासक्षेप डालो कि जुलाब न हो । जुलाब नहीं होगा तो समझुंगा कि आप के वासक्षेप का प्रभाव है ।" है न ! ढोकले खाते वक्त विचार नहीं किया और जुलाब बंद करने के लिए हमारे पास आते हैं ।

शास्त्रकथन मुजब पुरुष को ३२ कौर और स्त्री को २४ कौरका खुराक काफी है । पेट में ठोसकर खानेवाले के आँत ढीले पड़ जाते हैं ।

अति खाने के दो बड़े नुकशान है - अजीर्ण और अपचा । उदरपूर्ति से कम खानेवाले की खुराक लहू(रक्त) में परिवर्तित होती है । जब ज्यादा खानेवाले का सभी नीकल जाता है । एक और व्याकुलता बढ़ जाती है और दूसरी और अशक्त । एक और वमन होता है, तो एक और जुलाब । इसलिए ही 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' के न्याय पे शरीर को स्फूर्तिला और तंदुरस्त रखना हो तो अति न खाना, भूख से दस प्रतिसद कम खाना ।

(5) अँधकार में न खाना : अँधकार यानि सूर्यप्रकाश का अभाव । भले 1000 वॉल्टवाला बल्ब क्यूँ न लगाया हो तो भी वह अँधकार ही कहलाता है । इसमें खाना शरीर के लिए हानिकारक है ।

सूर्यपकाश के अभाव में आकाश में छोटे छोटे जीवों की उत्पत्ति सहजता से होती रहती है । ये जीव बारीक आँखो से नहीं दीख सकते । पहचान नहीं सकते ।

लाइट (बीजली) के प्रकाश के कारण अगणित जीवजंतु खींचकर आते हैं । और भोजन में गीरकर भोजन विषयुक्त बनाते हैं।

सूर्य के अभाव में पेट का कमल भी संकुचित होता है । इसलिए सूर्यास्त के बाद खाने से पेट पर भारी बोज और वजन जैसा लगने से पेट धीरे धीरे मंद पडने का संभव है । लीवर में से झरता पित्तरस कि जो गोल ब्लेडर में संग्रहीत होता है । वह और स्वादुपिंडमें रहे हुए स्वादरस पकवाशय में से पसार होते खुराक में मिलता है । यह पित्तरस खुराक में रही हुई चरबी के छोटे छोटे टूकड़े करता हैं । जिससे खुराक सुपाच्य बनता है । दिन में ये सभी रसों का झरन व्यवस्थित होता है । रात्री होते यह रसझरन का कार्य मंद पड़ते ही वह रस खुराक में नहीं मिलने से खुराक पचना मुश्किल बनता है ।

पूर्वकाल में रात को खाना भयंकर पाप गीना जाता था । किसी को शाप देते ऐसा बोला जाता था कि, "रात्रिभोजन का पाप लगो ।" इस पर से भी इस पाप की भयंकरता का ख्याल आता है ।

(6) आसन रहित न खाना : खाने के लिए अनेक आसन नियत है । बैठे बैठे खाने से खुराक सुपाच्य बनता है । इसलिए धर्मशास्त्र में एकाशनादि व्रतों का उल्लेख है । सोते सोते, खड़े खड़े या चलते चलते खाने से स्वास्थ्य को लम्बे समय में खतरा होता है ।

आज बुफेमें खड़े खड़े खाने का रिवाज सा हो गया है । रेंकड़ी पर खड़े-खड़े खाने की फैशन हो गई है । जानवरों जैसा दिखता है । इसलिए एक आसन पर बैठे बैठे खाना चाहिए ।

शरीर भी धर्म का साधन है । इसलिए धर्मशास्त्रों ने उसको स्वस्थ रखने के अनेक उपाय बताये है । मानवी उसका अमल करें तो वह सुखी हो जाय ।

परमात्मा ने मानव को सीधा (Vartical) बनाया है तो भी वह टेढा चलता है । जानवरों को टेढ़ा (Horizonatal) बनाया है तो भी वे सीधे चलते हैं । गाय मांस खाती नहीं है, सिंह घास खाता नहीं है । जबकी मानव को घास, मांस सभी चलता है । विकृत आहार से वह विकृत बनता जाता है । इन दोषों को सतत नजर समक्ष रखेंगे तो हम बीमारी के खप्पर से बच सकेंगे ।

C. श्रावक की दिनचर्या

दिनचर्या : आचार से विचार बनता है । अच्छे आचार से अच्छे विचार बनते है । बाह्य क्रिया से अंतर के ऐसे भाव यानि दिल की ऐसी परिणती सर्जन होती है । अच्छी क्रिया से अच्छी परिणती सर्जन होती है । इस हिसाब से श्रावकता के अच्छे विचार, अच्छे भाव, अच्छी परिणती का सर्जन और पोषण के लिए अच्छे विचार, अच्छी क्रियाएँ जरूरी है । इसलिए "श्राद्धविधि" आदि जैनशास्त्रोंने श्रावक-जीवन के दिनकृत्यों, पर्वकृत्यों, चौमासी कर्तव्यो, पर्युषण-कर्तव्यों, वार्षिक-कर्तव्यों और जीवन कृत्यों का विचार दिया है । इसमें पहले दिन-कृत्यों का विचार इस प्रकार....

ऊठते ही धर्मजागरिका : 'श्रावक तू ऊठे प्रभात, चार घडी रहे पाछली रात' । आत्महितार्थी श्रावक पिछली चार घड़ी रात की अर्थात् अंदाजित देढ़ कलाक बचे तब निंद्रामें से जाग्रत हो जाना चाहिए । उठते ही 'नमो अरिहंताणं' याद करना । बाद में विनय के लिए बिछौने में बैठकर नहीं लेकिन इसमें से बाहर नीकलकर मनमें पंच परमेष्ठि को नमन करते 7-8 बार भाव से नमस्कार मंत्र रटना । हृदयकमल की कर्णिका और 8 पंखडियों में उसका चिंतन हो सके । बाद में धर्म जागरिका अर्थात् आत्मचिंता करना कि, "मैं कौन हूँ ? कहाँ से आया हूँ ? कहाँ जाऊँगा । मेरा धर्मस्थान कौन सा ? यहाँ मेरा कर्तव्य क्या है । यह कौनसा कैसा कैसा अवसर ? कौनसे देव, कौनसे गुरु मिले है ? और उसको सफल करने लिए क्या उचित है ? .....

नवकार के लाभ : 'नवकार' - नमस्कार महामंत्र इसमें अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु-ये पाँच परमेष्ठी को नमस्कार किया जाता है । ये समस्त मंत्रो में शिरोमणि है । क्योंकि (1) कोइ भी मंत्र की साधना करते या शास्त्र को पढ़ने से पहले नवकार मंत्र याद करना चाहिए । (2) नवकार जिनशासन का सार है । (3) संक्षेप मे चौद पूर्व के उद्धरणरुप है । (4) मात्र अंतकाल पे नवकार प्राप्त करनेवाले की सद्गति होती है । (5) नवकार याद करनेवाले की आपत्तियाँ मीट जाती है । और संपत्ति प्राप्त होती है । (6) नवकार से अंतराय दूर होते हैं और मंगलमय श्रेष्ठ होता है । (7) एक ही नवकार-स्मरण में 500 सागरोपम की नरक की स्थिति तूटती है । (8) पंच परमेष्ठी के सर्वकृत्यों की अनुमोदना का लाभ

मिलता है । इसलिए सोते, जागते, उठते, बैठते, भोजन करते या व्यापार करते, घरमें प्रवेश करते या बाहर निकलते, हरेक कार्य-प्रसंग पे नवकार को पहले याद करना चाहिये ।

प्रभात के समय पे : प्रभात में जगकर नवकार-स्मरण और आत्मचिंता करके धर्मस्फूर्ति ले लेनी चाहिए । बादमें सामायिक, प्रतिक्रमण करना, ये जो शक्य न हो तो विश्व के समस्त तीर्थ, जिनमंदिर, प्रतिमाओं को स्थल के हिसाब से याद करके वंदना करनी चाहिए । विचरते भगवंत और शत्रुंजय को वंदना-स्तुति करनी चाहिए । तथा महानसंतो-सतीओं को याद करना चाहिए । उपकारीओं का स्मरण करना, मैत्री आदि भावना का चिंतन करना । बाद में पच्चक्खाण की धारणा करना या आत्मसाक्षी से कर लेना । पच्चक्खाण कमसे कम नवकारशी का करना । इसमें सूर्योदय पर दो घड़ी तक मूँहमें पानी की बूँद भी नहीं रखना ।

नवकारशी आदि पच्चक्खाण के लाभ : एक नवकारशी से 100 वर्ष की नरक वेदना के पाप नष्ट होते है । पोरसी से 1000 वर्ष की, साढ पोरसी से 10,000, पुरिमढ्ढ से 1 लाख, एकासन से 10 लाख, सुखी नीवी से । क्रोड, एकाशन दत्ती से 10 क्रोड, एकलाठाण से 100 क्रोड, आंबिल से 1000 क्रोड, उपवास में 10,000 क्रोड, छठ्ठ से लाख क्रोड, और अठ्ठमसे 10 लाख क्रोड वरस की नरक वेदना के पाप नष्ट होते हैं । पच्चक्खाण की ध्यारणा के बाद जिनमंदिर जाकर परमात्मा के दर्शन, प्रणाम और स्तुति करना । प्रभुदर्शन करते "हमको उच्च मनुष्यभव, धर्म-सामग्री तथा ऐसे प्रभु की प्राप्ति आदि पुण्य से मिलने से प्रभु का महान उपकार है ।" यह याद करके गद् गद् होना । चिंतामणि से अधिक दर्शन प्रभुने दिया । इसका ऐसा अतिहर्ष हो और प्रभु के अनुपम उपकार उपर कृतज्ञभाव याद करते रोमांच खडे हो जाय ! आँख अश्रुपूर्ण हो जाय । बाद में धूप, दीप और वासक्षेप पूजा तथा चैत्यवंदन, स्तवना करके पच्चक्खाण उच्चारना । बाद में गुरु के पास जाकर वंदना करके सुखशाता पूछकर उनके पास से पच्चक्खाण लेना । उनके पाणी, वस्त्र, पात्र, पुस्तक, औषध का लाभ देने की बिनती करना ।

बादमें घर आकर जो नवकारशी पच्चक्खाण हो तो जयणापूर्वक वह कार्य करके गुरु महाराज के पास आकर आत्महितकर अमूल्य जिनवाणी सुनना । कोई न कोई व्रत, नियम, अभिग्रह करना, जिससे सुना हुआ कारगर हो सके । और जीवन में आध्यात्मिक प्रगति हो सके ।

मध्याह्न और दोपहर : उसके बाद जीवजंतु मरे नहीं इसकी दरकार करके परिमित जलसे स्नान करके परमात्मा की अष्टप्रकार से पूजा करना । पूजा में अपनी शक्ति गोपने (गुप्त रखकर, आलस करके) बिना अपने घरके दूध, चंदन, कैसर, पुष्प, वरख, अगरबत्ती, धूप, दीपक, अक्षत, फल, नैवेद्य आदि द्रव्य सामग्री का सद्उपयोग करना । क्योंकि जिनेश्वर भगवंत ही परमपात्र है, सर्वोत्तम पात्र है । उनकी भक्ति में जरा सी समर्पित की गई लक्ष्मी, अक्षय लक्ष्मी बन जाती है । पंचाशक शास्त्र कहता है, "जैसे समुद्रमें डाली गई पानी की एक बुंद अक्षय बन जाती है ऐसे जिनेन्द्र भगवंत के चरण में रखी जरा-सी भी लक्ष्मी अक्षय लक्ष्मी बन जाती है । दर्शन, पूजा की विधि के लिए आगे सोचेंगे ।

द्रव्यपूजा के बाद भावपूजा में बहुत उल्लास से गद् गद् स्वर से मन रोता हो ऐसे चैत्यवंदन करना । इसमें अंत में 'जयवीयराय' सूत्र से भाव निर्वेद, मार्गानुसारिता, आदि खास लक्ष-रखकर आजीजीपूर्वक (गीड़गीड़ाकार) माँगना, हमें ऐसा लगे कि मुझे यह चाहिए । सूत्र का मात्र तोते की तरह रटण नहीं करना ।

बाद में, श्रावक घर आकर अभक्ष्य-त्याग, द्रव्य-संकोच और विगइ(रस) के नियमपूर्वक उणोदरी रखकर भोजन करके नमस्कार मंत्रादि धर्ममंगल करके जीवन-निर्वाह के लिए अर्थचिंता करने जाय । धर्ममंगल इसलिए करे कि धर्म-पुरुषार्थ यही ही श्रेष्ठ पुरुषार्थ है । इसलिए दूसरे (अन्य) पुरुषार्थ के आगे उसको रखना चाहिए । व्यापार में जूठ, अनीति, दंभ, निर्दयता आदि का आचरण नहीं होना चाहिए । उसकी खुब दरकार रखना । लोभ कम करना, कमाईमें से आधा भाग घरखर्च में (१/४ भाग धरखर्च+१/४ व्यापारमें), 1/4 भाग बचत ओर 1/4 धार्मिक कार्यमें-उपयोग करना ।

शामका भोजन ऐसी रीत से पूर्ण करना कि सूर्यास्त से दो घड़ी पहले (या अंतमें सूर्यास्त पहले) पानी का उपयोग करके रात्रिभोजन त्याग-रूप चउविहार पच्चक्खाण हो जाय ।

शाम को और रात को बाद में जिनमंदिर में धूप, आरती, मंगलदीप, चैत्यवंदन करना । बाद में शाम का प्रतिक्रमण और वह न हो तो स्वात्मनिरीक्षण, पापगर्हा, शांतिपाठ करके गुरु महाराज की सेवा की उपासना करना । घरमें कुटुंब में धर्मशास्त्र, रास या तीर्थंकर भगवान और महापुरुष के चरित्र सुनाना । बादमें स्वयं

नया नया अध्ययन करके तत्त्वज्ञान बढ़ाना । बादमें अनित्य अशरण आदि भावना भाना (करना, रखना) ।

स्थूलभद्र, सुदर्शन शेठ, जंबुकुमार, विजय शेठ-शेठानी, आदि के ब्रह्मचर्य के पराक्रम याद करना । अनंत संसार में भटकानेवाली और कभी तृप्त न होनेवाली काम वासना की जुगुप्सा का चिंतन करना, नींद आये तब नवकारमंत्र स्मरण करके सो जाना । और सोते सोते तीर्थों की यात्रा का विस्तार से स्मरण करना । सोने के बाद बीच में जग जायें तब ये - १० मुद्दे पर चिंतन करके संवेग बढ़ाना ।

1. सूक्ष्मपदार्थ, 2. भवस्थिति, 3. अधिकरण शमन, 4. आयुष्यहानि, 5. अनुचित चेष्टा, 6. क्षणलाभदीपन, 7. धर्मगुण, 8. बाधकदोषविपक्ष, 9. धर्माचार्य, 10. उदतविहार - (संवेग यानि दानादि क्षमादि धर्म का रंग, मोक्ष तमन्ना, वैराग्य, देव, गुरु, संघ, शास्त्र, भक्ति) को इस तरह सोचना-

रात में जगते क्या विचारना (संवेगवर्धक 10 चिंतन)

1. सूक्ष्मपदार्थ : कर्म उसका कारण तथा विपाक, आत्मा का शुद्ध और अशुद्ध स्वरूप, षड्-द्रव्य आदि सूक्ष्म पदार्थों की विचारणा ।

2. भवस्थिति : संसारस्वरूप चिंतन करना - "राजा रंक होता है, रंक राजा होता है । बहन पत्नी बनती है, पिता पुत्र बनता है...." ये देखने से संसार निर्गुण है.... इत्यादि संसार का विचित्र स्वरूप सोचना या भवस्थिति कैसे परिणत बनें ऐसा सोचना ।

3. अधिकरण शमन : अधिकरण यानि कि (1) झगड़ा या (2) कृषि-कर्म आदि तथा पाप साधन "मैं ये कब शमाउँगा, रोकुँगा ।" - ऐसी भावना करना ।

4. आयुष्य हानि : "प्रतिक्षण आयुष्य क्षीण हो रहा है, कच्चे घड़े में रहे हुए पानी की तरह नष्ट होनेवाला है, तो मैं कब तक कर्म को भूलकर प्रमाद में रहुँगा ।" - ऐसा सोचना ।

5. अनुचित चेष्टा : जीवहिंसा, असत्य, कूड, कपट आदि पाप कार्य कैसे बिभत्स है, उनका यहाँ और परलोक में कैसे कैसे कटु विपाक आते हैं, वही सोचना ।

6. क्षणलाभदीपन : (1) मानव जीवन की अल्प क्षणों का भी शुभ-अशुभ विचार कैसे महान शुभ-अशुभ कर्म बँधाता है । अर्थात् (2) द्रव्य, क्षेत्र, काल,

भाव से मोक्ष-साधना का यह कितना सुंदर अवसर मिलता है । (3) अँधेरे में दीपक समान और समुद्र में द्वीप समान जिनधर्म का ये कैसा सुंदर अवसर मिला है । - ऐसा सोचना ।

7. धर्मगुण : श्रुत धर्म के शमानुभवकारी गुण और चारित्र धर्म का मद, आशा, विकारादि के शमन द्वारा इंद्रादि से अधिक सुखानुभव गुण का चिंतन करना । अर्थात् क्षमादि धर्म के कारण, स्वरूप और फल संबंधी सोचना ।

8. बाधक दोष विपक्ष : धर्माधिकारी जीव जो जो अर्थरागकाम-रागादि दोष से पीड़ित हो, उसका प्रतिपक्षी विचार करना । उदा० पैसे के पीछे कैसे संकलेश तथा पाप होते हैं और धर्मक्षण की कैसी बरबादी होती है ।'... आदि सोचना ।

9. धर्माचार्य : धर्मप्राप्ति, वृद्धिमें कारणभूत गुरु कैसे निःस्वार्थ उपकारी ! कैसे गुणियल गुरु ! यह उपकार कैसा दुष्प्रतिकार्य ! यह सोचना ।

10. उद्यतविहार : अनियत वास, माधुकरी भिक्षा, एकांतचर्या, अल्प उपधि, पंचाचार-पालना, उग्र विहार, आदि कैसा सुंदर मुनिविहार ! मैं कब उसको प्राप्त करुँगा !...." उसका विस्तार से चिंतन करना ।

पूर्वकृत्य : धर्म की विशेष आराधना के लिए विशिष्ट दिन तय हुए है, जैसे कि दूज, पंचमी, अष्टमी, ग्यारस(एकादशी), चतुर्दशी, पूनम, अमावास्या, 24 प्रभु के कल्याणक दिन, कार्तिक, फागुन और अषाढ़ की 3 अठ्ठाई, चैत्र और आश्वीन मास की ओळी तथा पर्युषण अठ्ठाई के दिन, ये दिनों में दलना, कूटना, पीसना, कपड़े धोना आदि आरंभ-समारंभ का त्याग करना, हरी सब्जी का त्याग रखना, ब्रह्मचर्य पालना, शक्य हो तो सामयिक, प्रतिक्रमण, पौषध करना, विशेष जिनेन्द्रभक्ति करना, शक्य हो ऐसी तपस्या करना, विशेष विगइ का त्याग करना । पर्वविषयी विचार आगे पर्व के प्रकरण में करेंगे ।

D. पर्व और आराधना

नित्य दिन से पर्व के दिनों में विशेष प्रकार से धर्म की आराधना करनी चाहिए । क्योंकि जैसे व्यवहार में दिवाली आदि के खास दिनों में लोग विशिष्ट भोजन और आनंद, प्रमोद करते हैं, इससे सांसारिक उल्लास बढ़ता है; उस तरह पर्व-आराधना विशेष प्रकार से करने से धर्म का उल्लास बढ़ता है ।

पर्व दिन की नोंध

1	2	3	4
हरेक मास की 2 दूज 2 पंचमी 2 अष्टमी 2 ग्यारस 2 चतुर्दशी पूनम / अमावस्या कुल तिथि = 12 तिथि	का.सु.5 ज्ञान पंचमी 3 चौमासी चतुर्दशी मा.सु. 11 = मौन ग्या. मा. व. 10 = पोष दशमी पोष व-13=मेरुतेरश मेरु तेरस फागुन व. 8 = वर्षीतप प्रारंभ वर्षीतप प्रारंभ	वर्ष की अलग अलग तिथियों में तीर्थंकरो के 120 कल्याणक खास करके वीर प्रभु का च्यवन कल्याणक अषाढ सुद-14 जन्म कल्याणक चैत्र सुद-13 दीक्षा कल्याणक का. व. 10 कैवलज्ञान कल्याणक वैशाख सुद 10 मोक्ष कल्याणक दिवाली	6 अठ्ठाई कार्तिक फागुन अषाढ़ अठ्ठाई दिन (सुद- 7 से 14) चैत्र , आसो नवपदजी की ओली की दो अठ्ठाई पर्युषण की अठ्ठाई

सामान्य: पर्व के दिन में तपस्या, अर्हत् प्रभु की विशेष भक्ति, देववंदन, चैत्यपरिपाटी (गाँव/शहर के मंदिर में दर्शन करने जाना), समस्त साधुगण को वंदना, पौषध, सामयिक, ब्रह्मचर्य तथा दो बार प्रतिक्रमण, आदि करना । सचित्त जल, त्याग विगइ त्याग, हरी वनस्पति त्याग, दलना, कूटना, कपड़े धोना-रंगना-खोदना आदि आरंभ-समारंभ त्याग, क्लेश कलह का त्याग करना ।

प्राय: परभव का आयुष्य पर्वतिथिपे बँधता (तय होता) हैं । इसलिए पर्व के दिन धर्ममय जाये तो दुर्गति का आयुष्य बँधा न जाय । हर मास की दूज, आदि बारह तिथियाँ की आराधना करना । ये न बन सके तो कम से कम पाँच तिथियाँ-सुद-5, दो-8 और दो -14 को तो अवश्य आराधना करना । बाकी बारह में से एक तिथिमें भी वही उद्देश्य से उपवास आदि से खास आराधना की

जाती है, जैसे कि ग्यारस (एकादशी) पे 11 गणधर की तथा 11 अंग की आराधना की जाती है ।

सभी पर्वतिथियाँ पे उच्च रीत से शायद आराधना न हो सकें तो भी शक्य प्रमाण में कोई न कोई विशेष त्याग, जिनभक्ति, दान, प्रतिक्रमण, आरंभ-संकोच इस प्रकार से आराधना करनी चाहिए ।

कल्याणक तिथिओंमें दूसरा कुछ न बन सके तो कमसे कम जिसका कल्याणक हो उस प्रभु के नाम से जो कल्याणक हो उसकी माला-नवकारवाली गिनना, क्योंकि इससे अर्हद्भक्ति का भाव जागृत होकर बढ़ता है ।

चौमासी एकादशी और चौमासी चतुर्दशीपे उपवास, पौषध, चौमासी देववंदन आदि किया जाता है । आराधक आत्मा को पाक्षिक चतुर्दशीपे उपवास, चौमासी चतुर्दशी पे छठ्ठ (दो उपवास) और संवत्सरी पे अठ्ठम (तीन उपवास) अवश्य करना चाहिए । इसमें भी चौमासी छठ्ठ की शक्ति न हो तो एकादशी और चतुर्दशी के अलग अलग उपवास करने से भी चौमासी पर्व का तप पूर्ण होता है ।

कार्तिक सुद -1 सुबह में पूरा वर्ष चढ़ियाते धर्मरंग से, अच्छी धर्म साधना से और सुंदर चित्त-समाधि से पसार हो सके इसलिए नवस्मरण, गौतमरास सुनना, बादमें चैत्यपरिपाटी, बाद में स्नात्र उत्सव के साथ विशेष प्रभुभक्ति करना ।

कार्तिक सुद-5 का.सु. 5 को सौभाग्य पंचमी कहते हैं । उस दिन आराधना के लिए उपवास, पौषध, ज्ञानपंचमी के देववंदन, नमो नाणस्स की 20 माला का 2000 जाप होता है ।

मागशर सुद 11 मौन एकादशी कहते हैं । इसलिए पूरे दिन-रात मौन रखकर उपवास सहित पौषध करना । मौन एकादशी में देववंदन तथा उस दिन पे हुए 90 भगवान के 150 कल्याण की 150 माला गिननी चाहिए ।

मागशर वदी- 10 पार्श्वप्रभु का जन्म कल्याणक होने से खीर का एकाशना या आयंबिल करके पार्श्वप्रभु की स्नात्रादि से भक्ति तथा त्रिकाल देववंदन और 'ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ अर्हते नमः' की 20 माला गीनी जाती है । विशेष में मा-वदी 9 एकासना किया जाता है । तथा **महा-वदी -11** पार्श्व दीक्षा कल्याणक होने से एकासना किया जाता है । बाद में हर महिने की वद दशम पे आराधना करनी चाहिए ।

मेरुतेरस-पोष वद -13 ये युग के प्रथम धर्मप्रवर्तक श्री ऋषभदेव तीर्थंकर प्रभु का मोक्ष-गमन दिन है । उस दिन को उपवास करके पाँच मेरु की रचना तथा घी के दीपक करके 'श्री ऋषभदेव पारंगताय नमः' के 2000 जाप कीये जाते हैं ।

फागुन वदी-8 ऋषभदेव प्रभु के जन्म और दीक्षा-कल्याणक का दिन है । यहाँ आगे के दिन से छठ्ठ या अठ्ठम करके **वर्षीतप** शुरु किया जाता है । इसमें एकांतरे उपवास-बियासण सतत चलता है । बीच में चतुर्दशी आये तब उपवास ही करना पड़ता है । चौमासी छठ्ठ करना । ऐसे सलंग (सतत) चलते चलते दूसरे वर्ष के वैशाख सुद-2 तक तप चलता है ।

वैशाख सुद-३ अक्षय तृतिया के दिन वर्षीतप का पारणा सिर्फ गन्ने के रस से किया जाता है । ऋषभदेव प्रभुने तो सलंग अकेले चोविहार उपवास 400 दिन तक किये और श्रेयांसकुमारने वैशाख सुद-3 के दिन उन्हें पारना कराया था । इसका यह वर्षीतप सूचक है ।

वैशाख सुद-11 महावीर प्रभुने पावापुरीमें शासन की स्थापना की । 11 गणधारी दीक्षा, द्वादशांगी आगम रचना और चतुर्विध संघ रचना इस दिन हुई थी । उसकी सकल संघमें खास समूह उपासना होनी चाहिए । (जैसे आज 15 अगस्त पूरा देश मनाता है ना.... ?)

दिवाली-प्रभु महावीर देवने आगे के दिन ही सुबह से धर्मदेशना शुरू की थी, और सलंग दिवाली की पीछली रात तक यानी 16 प्रहर देशना चली, बादमें प्रभुने निर्वाण प्राप्त किया । लोगोंने भगवान के निर्वाण की स्मृति में दीपक जलाकर भाव प्रगट किया, तबसे दिवाली पर्व मनाया जाता हैं ।

निर्वाण के बाद प्रभात में गौतम स्वामीजी को कैवल्यज्ञान हुआ था । छठ्ठ करके दिवाली की रात के पहले 'श्री महावीर स्वामी सर्वज्ञाय नमः' की 20 माला, पीछली रात में वीर निर्वाण के देववंदन तथा 'श्री महावीर स्वामी पारंगताय नमः' श्री 20 माला बाद में गौतमस्वामीजी के देववंदन और 'श्री गौतमस्वामी सर्वज्ञाय नमः' की 20 माला गिनना ।

श्री महावीर भगवान के पाँच कल्याणक दिनों में विशेष में वरघोडा, समूह वीर गुणगान, पूजाभावना और तप के साथ 20-20 मालाएँ गिनना-क्रमशः ऐसे माला गिनना- कार्तिक वदी-10 दीक्षा कल्याणक के दिन श्री महावीरस्वामी

नाथाय नमः, चैत्र सुद-13 जन्मकल्याणक-श्री महावीरस्वामी सर्वज्ञाय नमः, अषाढ सुद-6 च्यवन कल्याणक-श्री महावीर स्वामी परमेष्ठिने नमः, दिवाली के दिन निर्वाण कल्याणक-श्री महावीर स्वामी पारंगताय नमः ।

चौबिस तीर्थंकर भगवान के कल्याणक के दिन तप, जप, जिनभक्ति आदि से आराधना करने में अद्‌भूत लाभ है ।

तप में एक ही दिन 1, 2, 3,4, या 5 कल्याणक हो तो क्रमशः एकाशना, नीवी, आंबिल, उपवास और उपवास के साथ एकासना करना । प्रभु का चरित्र पढ़ना । अरिहंत पद आराधनार्थं 12 लोगस्स का काउस्सग्ग, 12 खमासमण, 12 स्वस्तिक, त्रिकाल देववंदन, उभयकाल प्रतिक्रमण, ब्रह्मचर्य पालन... आदि करना । ये सभी शक्य न हो तो कमसे कम जो कल्याणक हो उसकी माला गिनकर भी कल्याणक की स्मृति करना ।

6 अठ्ठाई : कार्तिक, फागुन, अषाढ़ - की 3 अठ्ठाई-8 दिन-सुद-14 तक, 2 अठ्ठाई-चैत्र सुद और आसो सुद 7 से 15 तक शाश्वती ओली में और-1 अठ्ठाई पर्युषण पर्व की, सावन वदी 12 से भादों सुदी-4 तक ऐसे छः अठ्ठाई पर्व की आराधना । इसमें हरी सब्जी का त्याग, आरंभ-संकोचादि करना ।

शाश्वती ओली में खास करके नव पद (पंचपरमेष्ठी और दर्शन, ज्ञान, चरित्र, तप) की आराधना होती है । 1-1 दिन को 1-1 पद । इनमें नौ दिन आयंबिल करने के होते है । और जो पद हो उसकी 20-20 माला, प्रदक्षिणा, खमासमण और स्वस्तिक । नव मंदिर में नव चैत्यवंदन करना ।

पर्युषण में आठों दिन अमारि प्रवर्तन (जीवों को अभयदान), साधर्मिक वात्सल्य, कल्पसूत्र का श्रवण के साथ अठ्ठम तप, बारसासूत्र श्रवण, सर्व जीवों की क्षमापना, चैत्यपरिपाटी और सांवत्सरिक प्रतिक्रमण - ये खास करना होता है ।

5. फास्टफूड, टीनफूड, प्रोसेस्डफूड, पेश्चुराइझडफूड का त्याग

जैनदर्शन की मान्यतानुसार कोई भी बाजारु पदार्थ भक्ष्य बन सकता नहीं है, क्योंकि जैनदर्शनमें तैयार हुए खाद्यों की जो टाइम लिमिट दी है, वह पंदर, बीस और बढ़कर तीस दिन की है । सभी तैयार खाद्यों की टाइम ओवर लीमीट होते ही तुरंत वे अभक्ष्य बन जाते हैं । घर में धीमी आँचपे चूले पर बनती; मिट्टी, ताँबा या पीत्तल के बर्तन में बनी हुई चीज, आज ही आज उपयोग में आ सकें ऐसी ताज़ा रसोई (खाना) आरोग्यप्रद मानी जाती है । अलग अलग टीन में पेक की हुई या कन्टेइनरमें रखी हुई वेराइटीझको जैनदर्शन अभक्ष्य मानता है । आज भी जैन साधु-साध्वी ऐसी पेर्कीगवाली कोई भी चीज गोचरी में नहीं लेते ।

मनुष्य की कीडनी को फेईल करनेवाले Cold drinks बोटलों में पेक करके अलग अलग नामसे बेचे जाते हैं वे सभी अभक्ष्य है । साकर, पानी और फ्रूटके रस इकठ्ठे होने के बाद मात्र एक रात बीत जाने से ये पदार्थ अभक्ष्य बन जाते हैं । बिसलेरीकी वॉटर बॉटलें भी एक रात जाने मात्र से अपेय बन जाती है । कॉल्ड ड्रींकस और बिसलेरी का पानी कभी भी छान सकते नहीं है । इस देशमें घर की पवित्र जगा का नाम था पनसाल । इस पनसाल में रखे मिट्टी के बर्तन का पानी प्रभात में घट्ट गलने से छाने बिना या मटकी साफ कीये बिना उपयोग में नहीं लिया जाता था । बॉटलों का बिना छाने हुआ पानी मानवी पेटमें डालता है और वह आदमी मोर्डन कहलाता हैं । मेरा भारत महान् !

जैन दर्शन की आहार शुद्धि के नियमानुसार सभी फास्टफूड, टीनफूड, कोल्ड ड्रींकस और बिसलेरी आदि सभी ही खाद्य पदार्थ और पेय (ड्रींक्स) एकसपायर्ड डेटवाले गिने जाते हैं । प्रभुने जो बातें बताई थी वे सभी कैवल्यज्ञान के प्रकाश से बताई थी । ये कभी असत्य नहीं हो सकती । आज के सायन्स पास कोई कैवल्यज्ञानी नहीं है । उसको लेबोरेटरी में जाना पड़ता है । महीनों तक मथना पड़ता है । उसके बाद रीझल्ट जाहिर करना पडता है । वह रीझल्ट भी कायम के लिए परिपूर्ण नहीं होता ।

खाद्य पदार्थों को लम्बे समय तक सँभालने के लिए ऐसे केमिकल्स, कन्टेईनर; कॉल्ड-स्टोरेज; फ्रीज इत्यादी विज्ञानने ही खोज कीये हैं । घरमें ये सभी चीज लग जाने के बाद अब रह रहकर चीख चीखकर विज्ञान अब कहता है कि ये फास्टफूड, टीनफूड़, आदि खाना नहीं । ये खाने से रोग होता हैं । हमने तो कई सालों से मना किया है । बिस्कीट और चोकलेट जैसी चीजको भी अभक्ष्य गीनकर छोड़ने को तुमको अनेकबार समजाया है । आपतो उँची आईक्युवाले शार्प और ब्रीलीयन्ट आदमी हो । हमारी शास्त्रों की बातें आपके गले के नीचे कैसे उतरेगी ? यानी आप जल्दी नहीं समझते । आपने हमारा नहीं माना और ठसोठसो डिब्बें, फोइल्स, और पेप्सी की बॉटलें बेहिसाब पेटमें डाल दी हैं । अब जब कीडनी, लीवर, आँत औ चमड़ी के दर्द बढ़ गये तब विज्ञान को लेबोरेटरी में जाने की फर्ज़ पड़ी । फिरसे सभी पदार्थों को चेक किये । तब मालूम हुआ कि सभी रोगों का पितामह वह तैयार खुराक है । इसके बारेमें कई लेख आपकी समक्ष रखे हैं । आप शांति से सोचना । जहाँ तहाँ और ऐसा वैसा खाने का जल्दी बंध करना । इस देशमें जब भी दूसरे गाँव जाने का होता था तब लोग साथमें भाथा का ड़िब्बा ले जातें । इसमें खाखरा, पूरी, सक्करपारे, कड़क थेपले, सींगदाणाकी चटणी, और आचार जैसी चीजें रहती । कभी भी कोई चीज बाहर से नहीं लेना पड़ती । और आराम से 15 दिन की मुसाफरी भाथे पर हो सकती थी । आज के युवानों को जिन्समें से हाथ बहार नहीं नीकालना है । एक डिब्बा हाथ में पकड़ने से शर्म आती है । बाजार में अभक्ष्य पदार्थ खाने के बाद बिमार पड़ने में या युवान वय में होस्पिटल की खाट में आराम फरमाने से जरा भी शर्म नहीं आती ।

जिसको जैन धर्म का पालन करना है, आरोग्य का रक्षण करना है, दवाई के पैसे बचाना है; ऐसे समझदार लोग आज भी भाथा का डिब्बा साथ में रखते हैं । वे अपना निर्वाह तो करते ही हैं और साथ में कभी साधु-साध्वीको गोचरी वहोराने का आकस्मिक लाभ भी लेते हैं । क्या मूर्खाई की कोइ सीमा हो सकती है ? हॉटलमें बैठा हुआ युवान होटल के पानी की चा पीता है और बिसलेरी की बॉटल का पानी पीता है, क्योंकि होटल का पानी प्रदुषित होता है । आज के युवान का भेजा है अजब-गजब ! पूरी होटल स्वच्छ, उसके सभी पदार्थ स्वच्छ । बस, केवल उसका पानी ही अस्वच्छ । ऐसी स्वच्छ समझ तो एज्युकेटेड़ आदमी के बीना और किसके पास होगी ?

नए नए संशोधन के परिणाम बाहर आते हैं । इस अनुसार अब स्पेनिश डॉक्टरों का मानना है कि डिब्बापेक (टिन्ड) वेजीटेबल, फल और डिब्बे में पेक हुए बियर डिब्बे के अंदर का केमिकलवाला आवरण आदि पुरुष के वीर्य को दुषित करते हैं । "बिस्फेनोल-एऽ (Bisphenol-A) नामक रसायण फूड केन्स के अंदर के आवरण में उपयोग किया जाता है । अंदर की धातु बिगडे नहीं इसलिए इस आवरण को मढ़ते हैं । लेकिन ऐसे आवरण खाद्य चीजमें जाते हैं और इसे खाने से उसमें रहा हुआ ऑस्ट्रोजन नामक तत्त्व पुरुषमें निर्बलता लाता है । युरोप की रसायन पैदा करनेवाली कई कंपनियाँ इससे चिंतित हो गई है ।

लंडन टाइम्स के मेडिकल पत्रकार लोइस रोजर्स लिखते हैं कि पेट्रोल और प्लास्टिक उद्योग के रसायन स्त्रीहोर्मोन की नकल करते हैं । उपरांत स्त्रियाँ जो गर्भनिरोधक गोलियाँ और अन्य दवाइयाँ खाती हैं और वो अंतमें तो सृष्टि के जलभंडार में मिल जाती है और बाद में पुरुषों के शरीर में जाकर हानि करती हैं । इसलिए आजकल पुरुषों में निर्बलता बढ़ती जाती है । टिन्ड फूल के डिब्बे में थेलेटस (phthalates) नामक रसायन उपयोग में लिया जाता है । इससे वीर्य पर विपरीत असर होती है ।

डिटरजन्ट्स और बच्चों को दूध पीलानेवाली प्लास्टिक की बोटलों के रसायण भी हानिकारक है, ऐसा ब्रिटिश सरकार के विज्ञानी कहते हैं । आजकल युगलों में बिनफलद्रुपता बढ़ती जाती है । संतानहीन युगलों की संख्या मुंबई में भी ज्यादा है । जीसको सलामत रहना हो उनको टीनपेक, टोमेटो ज्युस (सोस) आदि अद्यतन पेय से दूर रहना चाहिए । संतति पैदा करनेवाली दवा या उपचार लेनेवाले को तो खास । इस हिसाब से टीनपेक रसगुल्ले घरमें हो, उनको संतानवांछु पुरुषों से तो दूर रखना । अबतक ऐसी भूल हुई हो तो उन लोगों के लिए यह एक नुकसान पहुँचनेवाला है । अब ऐसे खाद्यों से दूर रहकर आमले की मौसम में सुबह में हररोज चार अमले का ताजा रस सबसे पहले पी लेना ।

"21वी सदीमें धर्म और आध्यात्मिकता मुख्य दवाइयाँ बनेगी"- प्राकृतिक जीवन शैली पर परिसंवाद :-

"शरीर, दिमाग और आत्मा के समन्वयसे ही एक संपूर्ण स्वस्थ मानव शरीर की रचना होती है । ये तीनों एक दूसरे के साथ नजदीक का संबंध रखते हैं ।

लेकिन हम इस तीनों को एक-सा महत्त्व नहीं देते । इसके परिणाम-स्वरूप 20 वीं सदी के इस अंतिम समय में अनजाने और जान लेवा रोग पैदा हुए हैं । 20वी सदी के बहुधा रोग 'सायकोसोमेटिक' यानि दिमाग और शरीर के पारस्परिक संबंध में तनाव उपस्थित होने से पैदा होते हैं । आज की वैज्ञानिक खोजें इन रोगों को काबू में रख सकेगी परंतु मीटा नहीं सकेगी । इसलिए 21 सदीमें धर्म और आध्यात्मिकता मुख्य दवाइयाँ बन जाएगी ।"

"आज मानवीने रोग पैदा करने की सभी व्यवस्था अपने आप खड़ी कर दी हैं और रोग आ जाने के बाद उसके सामने लडने का काम कर रहा हैं । लेकिन ये लड़ाई हकीकत में तो साया के साथ है । मूल के साथ नहीं । ये लडाई से बचने के लिए हमें शरीर की योग्य जरूरत पूर्ण करने का आसान काम ही हाथमें लेना है ।"

चा, कॉफी, ठंडे पेय तथा बाज़ारमें मिलते फास्टफूड और प्रोसेस्ड फूड, चोकलेट आदि जान लेवा रोगों के लिए जिम्मेदार हैं । ऐसा आहार शरीर में ज़हर तो फैलाता ही है लेकिन उसके साथ शरीर के आवश्यक तत्त्वों की कमी भी पैदा करता है ।

ऐसी बिनतंदुरस्त खुराक से ब्लड प्रेशर बारबार ऊँचा तथा नीचा होता जाता है, जो होर्मोन्स में तकलीफ पैदा करती है । जो अपने मूड में भी बदलाव लाता है । आज के बच्चे बिल्कुल असहिष्णु होने के पीछे तथा पूरा समाज गुन्हाखोरी की ओर ढल रहा है उसके पीछे यही कारण जिम्मेदार हैं ।

होर्मोन्स के बदलाव से आदमी चीड़चीड़ा हो जाता है । उसकी अपेक्षाएँ बढ़ती है । जो पूरी न होने से हताशा आती है और हताशा मानवी को गुन्हागार बनाती है ।

शरीर के साथ दिमाग को भी पोषण की जरूरत होती है । दिमाग का पोषण है आनंददायक कार्य । जिसमें पढ़ना, खेलना, नाटक, फिल्म यानि दिमाग को खुश रख सकें ऐसी तमाम गतिविधियों का समावेश होता है । सिर्फ काम ही करने से दिमाग को असर होती है । और उसकी विपरीत असर शरीर पर होती है ।

इस तरह आत्मा की भी अपनी आवाज़ है । जिसमें फिलोसोफी तथा प्रार्थना का समावेश होता है । ये दो बाबतों से हकारात्मक वर्तन दिखाने का मानवी का

मन होता है । ऐसा वलण हकारात्मक होर्मोन्स पैदा करते हैं । इससे शरीर स्वस्थ बनता है ।

आज हमने कुदरत की व्यवस्था को बिखेर दी है । रासायणिक खाद के ज्यादा उपयोग से एक ही फायदा होगा कि अस्पताल ज्यादा चलेंगे । इन अस्पतालों से नई पीढ़ी संपूर्ण ठीक कभी नहीं होगी । क्योंकि आज हम गलत नींव डाल रहे हैं । हमने आदमी को बीमार बनाने की तमाम व्यवसथा पैदा की है ।

खाने पीने में कुदरती और बिना प्रोसेस किया हुआ आहार नहीं लेंगे तो भयानक परिस्थिति का सर्जन होगा । आज विकृति अपने आहार में है । जो रोग बुढ़ापे में होता हैं वे आज छोटे बच्चों में नज़र आते हैं । लूले, लँगडे, अपंग बच्चें मनुष्यों में जन्म लेते है । आहार की विकृति पूरी सभ्यता का नाश कर सकती है ।

मरते दम तक रोगविहीन जीवन जीने का मानवी का अपना अधिकार है । इसलिए मानवी को प्रकृति की नजदीक आने की जरूर है । जिस नियम को प्राणी पालन करते हैं, उसे हम समझते नहीं हैं । शरीर की अंदर छूपी शक्ति हमें हमेशां तंदुरस्त रखने की कोशिश करती है । लेकिन हम शरीर पर जब इच्छा हो तब खा-पीकर सतत अत्याचार करते रहते हैं । ऐसा होकर भी अंदर की शक्ति हमको ठीक कर देती है । शरीर तंदुरस्त रखना उसका स्वभाव है । हमें सिर्फ उनको सहकार देना है ।

विदेशी कंपनियाँ द्वारा चूपके चूपके मांसाहार का प्रचार चालू है । जो शाकाहारी को मांसाहारी बनाने का चेप है । भारत का रहा-सहा चारित्र और सत्त्व का नाश करता रहेगा । केन्सर जैसे रोग बढ़ेंगे । इसलिए तमाम प्रजा को, प्रधानमंत्रीको, आरोग्यमंत्रीको, डॉक्टरों को, वैद्यों को - इसके सामने पडकार फैंकने की जरूर है । पैसे के जोरसे ऐसी कंपनियाँ पगपेसारा कर जाती है । अंतमें देश के अध:पतन को न्योता देते हैं । भारत में मेकडोनाल्ड चेईन रेस्टोरा (लाल रंग का) खुलने की तैयारी में हैं । अमरिका में देढ़ क्रोड ग्राहक रोज 'हेम्बरगर' खाते हैं । हेम्बरगर यानि अमरिकन प्रकार की सेन्डवीच; जो गोल आकार की बनती है । उसके अंदर के दो पडों के बीच गाय के मांस की कतरियाँ रखी जाती हैं । हररोज अनेक गायों की कतल की जाती हैं । अमरिका में 35 अबज डोलर-1 लाख पाँच हजार क्रोड रुपियेका गाय का मांस खाया जाता है । जिस के पछी 21 क्रोड खर्च कैसे होता

है ? मेकडोनाल्ड अपनी गायका उछेर करके उसकी कत्ल(हत्या) करके हेम्बरगर बनाता है । इस तरह दूसरी कंपनियाँ भी हेम्बरगर बनाती है । रसलोलूप जीव भावि परिणाम का विचार किये बिना अनेक न-खानेलायक पदार्थ खाते जाते हैं । परिणामस्वरूप हिंसकवृत्ति, क्रूरता, केन्सर, अनाचार से एइड्स जैसे जहरीले रोग के भोग बनते हैं । जिसका वर्णन आहार शुद्धिमें किया है । जिसको पढ़ो और सोचो । हेम्बरगर के 'शेर' नजदीक में आ रहे हैं । ऐसे अनेक प्रकार के हिंसक शेरों से अगणित नुकसान है । प्रजा के आरोग्य की और देश की रक्षा के लिए कैसरिया करना पड़ेगा ।

देश-विदेश में शाकाहार खुराक के नाम से बनावट !

ब्रिटिश वेजीटेरीयन सोसायटीने जाहिर किया है कि, (1) वेजीटेबल सूपके डिब्बे में चीकनसूप होता है । बिस्कीटों में गाय-बैल के मांस में से बनी हुई चरबी का उपयोग होता है; जीलेटीन का उपयोग होता है; तो भी उन पर स्युटेबल फोर वेजीटेरीयन्स का लेबल होता है ।

लंडन के स्टोर में घूघरे या कचौरी जैसी इंग्लीश वानगी मीन्स पाई खरीदो । उन पर वेजीटेरीयन लिखा होता है, लेकिन ये कचौरी-घूघरे भेड़ और प्राणीओं की कीड़नीमें से मिली हुई चरबी में तला जाता है ।

चेरी का आईसक्रीम, स्ट्रोबेरीझ, लेसचेरीझमें E-202 नामक रसायन होता है, जो कोचीनील है । वह पिल्लू और चपडेमें से बनता है । 'वेजीटेरीयन' नाम देकर ठगाई की जाती है । इसलिए देश-विदेशमें विमानी मुसाफरी, होटल-रेस्टोरन्ट का खुराक टालना चाहिए ।

निम्न चीजों की पहचान करो और बचो ।

1) एडिटीझ खाद्य पदार्थों को लम्बे समय रखने के लिए रसायन मिश्र करने पडते है । पेकेट पर इमल्सी फायर्स, फेट्टी एसीइझ, E-471 लिखा होता है । इन सभी में प्राणी की, गाय की चरबी होती है । तो भी 'वेजीटेरीयन फूड' का लेबल लगता है ।

2) आल्कोहोल, मदिरा, बियर, कई वाईन्स पीने से मांसाहार हो जाता है । बियर, मदिरा, रिफाईन करने सूखा लहू (ड्राय ब्लड) या तो मछलीमें से नीकलता आइसीग्लास का उपयोग किया जाता है ।

3) विदेश में बिस्किटमें गाय की चरबी, व्हे पावडर उपयोग किया जाता है । व्हे पावडर बकरी की आँत का अर्करस है ।

4) चीझमें उपयोग किया जाता रेनेट बकरा या जन्मे हुए बछड़े का अर्क-एन्झाइन है । डुक्कर के पेट की चरबीमें से पेप्सीन बनता है । जो चीझमें भी उपयोग किया जाता है ।

5) च्युंइगममें उपयोग में लिया जाता ग्लीसरीन गाय, बैल की चरबी में से बनता है ।

6) क्रिस्प-करकरी नास्ता की चीज, चावल की चकरी में व्हे का उपयोग होता है ।

7) फीश ओइल कई बिस्कीटों में, केक-पेस्ट्रीमें और मार्जरीन में मछली का सस्ता तेल उपयोग में लिया जाता है । मार्जरीन सींगतेल या वनस्पति तेल में से बनता है । लेकिन उसका मुलायम बनाने के लिए मछली का तैल मिक्स किया जाता है । जिसको ब्रेड पर लगाते हैं ।

8) जिलेटीन बहुधा गायकी हड्डी और पाँव की खुर में से बनता है । जो जेली, आइस्क्रीम, चीझ, केक, विदेशी स्वीट्स और मीन्ट में उपयोग की जाती है ।

9) ओर्गेनिक पैदाइश-कुदरती स्वादमें से बनती सब्जियाँ बेचने से पहले सूखे लहू, हड्डी, मछली का चूरा, आदिमें से बने हुए रसायन से धो जाते हैं, जो नुकशानकारी है ।

10) सूप और सोस विदेश के स्टोर में शाकाहारी के लिए विश्वासपूर्ण नहीं होते । इसमें मछली या मांस का उपयोग होता है । मशीन के प्रथम चक्करमें चीकन कतरा जाता है, बाद में उसमें सब्जियाँ कतरी जाती है ।

11) स्वीट और कन्फेशनरी खाने से शाकाहार तूटता है । अनेक पीपरमीन्ट-स्वीट में जीलेटीन, गाय की हड्डी का पावडर उपयोग किया जाता है ।

12) अमरीका में मेक्सीकन रेस्टोरामें 'टेकीला' नामक मदीरा की बोटलमें उत्तेजना लाने के लिए कीड़े डाले जाते हैं । इस कीड़ेका अर्क मदिरा के साथ पेटमें जाता है ।

13) कई टूथपेस्टों में जीलेटीन आता है ।

14) वीटामीन D, B-12 प्रवाही दवा में चरबी, हड्डी का अंश होता है ।

15) यागर्ट गाय के दूधमें से दहीं जमाने के लिए जीलेटीन का उपयोग किया जाता है ।

ऊँचाइ बढ़ाने के लिए मानव के मुर्देमें से पीच्युटरी ग्रंथी निकालकर 'ग्रोथ होर्मोन' बनाते हैं । ये दवाईया ठींगने बच्चोंने ली और बाद में 20 वर्ष की उम्र में मेड-काडडीझीस रोग से कई बच्चों की मृत्यु हो गई ।

ऐसी जीवन को बिगाड़नेवाली बाहर की नित्यनयी चीजों से आज के समय में सभी को बचना चाहिए ।

सबसे कातिल जहर कौनसा ? पोटेशियम सायनाईड ? बार्बिटुरेट ? आर्झनिक ? इससे ज्यादा जीवलेण जहर "सी-बोटुलिझम" नामक सूक्ष्म जीवाणु पैदा करता हैं । माइक्रोग्राम के फक्त 0.12. वे भाग जितना जहर मृत्यु करने के लिए काफी है ।

सी-बोटुलिझम का पूरा नाम तो क्लोस्टिडियम बोटुलिझम है, लेकिन उच्चार सरल बने इसलिए उसके प्रथम शब्द को घटा दिया है । ये जीवाणु सालो से टीन फूड उद्योग को परेशान कर रहे हैं । सूप से लेकर तैयार मछली तक के अनेक खाद्यपदार्थ हवाचुस्त डिब्बे में पेक करनेका बड़ा उद्योग युरोप, अमरिका देशोमें चलता है । भारत में भी यह उद्योग चालु हो गया है । खुब चौकसी और खुब स्वच्छता रखी जाती है तो भी सी-बोटुलिझम की जीवलेवा बला किस डिब्बेमें घुस जाती है यह कहा नहीं जा सकता ।

आज भी मोत की तलवार टीनफूड खानेवाले हरेक व्यक्ति के सिर पर घुर रही है । तलवार अनेक पर तूट पडती है, लेकिन किसके भाग में मौत भरा डीब्बा आया है, उसकी जानकारी तो टीनफूड खाने के बाद ही होती है और बाद में बचने का कोई चान्स नहीं रहता ।

सी-बोटुलिझम आश्चर्यजनक माया हैं । ये जीवाणु सीर्फ तीन-चार माइक्रोमीटर लम्बे होते हैं । (एक माइक्रोमीटर यानि मीटर का दस लाखवाँ भाग) । वे गहरी जमीन में रहने के लिए माहितगार हैं । अन्य अनेक सजीव के लिये प्राणवायु, सचमुच में प्राणदाता हैं । जब कि सी-बोटुलिझम को वह माफक नहीं आता । इस खासियत की वजह से वह कुदरती संजोगो में बहुत कम खतरेरुप बनता हैं । क्योंकि हवा के जथ्थे के बीच अस्तित्व टीकाना उनके लिए मुश्किल है । किन्तु

हवाचुस्त डिब्बे में संजोग कुदरती नहीं होते । खुराक को संभालने के लिए उत्पादक इसमें शून्यावकाश पैदा करते हैं । इसलिए खुराक में जीवाणुओं की शरूआत होते ही प्राणवायु के अभाव की वजह से उनको अनुकूलता मिलती है । जीवाणु की चयापचयकी क्रिया जोर पकड़ती है । और 'बोटुलिनस' नामक जहर को मुक्त करने लगते हैं । चयापचय की आड़पैदाश जैसा हलाहल विष खुराक में मिलता हैं । खुराक का ये डिब्बा तो ग्राहक खरीदता है उसका 99% नुकशान तो तब से शुरू होता है । पहला हमला पेरलीसीस का होता है । क्योंकि शरीर में दाखिल हुआ बोटुलिनस जहर सबसे पहले ज्ञानतंतु का संचार बंध कर देता हैं । फेफड़ेकी और हृदयकी गति का नियमन करनेवाला भी ज्ञानतंत्र है । इसलिए मौत दोनों रीत से टीन फूड के शौकीन को घेर लेती है ।

सी-बोटुलिझम 212 फेरनहीट के उत्कलन बिंदु पर भी नहीं मरते । खुराक को इससे ज्यादा गरमीमें गरम नहीं कर सकते । ईस जीवाणु को खतम करने के लिए खुराक में जलद रसायण का मिश्रण मोत को न्यौता देनेवाला होता है ।

जैनदर्शन रेड सिग्नल बताता है कि पानी के अंशवाली हरेक बासी चीजमें रात्रि पसार होने से नये नये असंख्य त्रसजंतु-बेक्टेरिया उत्पन्न होते रहते हैं । इन जहरी जंतुओं का रस खुराक को जहरीला बनाता हैं । इस खानेवाले को दस्त-वमन (diaria-vomit) होता है; या उसकी मृत्यु भी होती है ।

ॐ

6. जैन प्रतिभाएँ

A. अकबर प्रतिबोधक आ. हीरसूरीश्वरजी म.सा.

मुगल बादशाह अकबर जैसी व्यक्ति के पास पर्युषण के दिनों में पूरे राज्यमें अमारि का -अहिंसा का प्रवर्तन करावाया । उसमें और अकबरने अपनी तरफसे पर्युषण के आगे-पछी 2-2 दिन ज्यादा अमारि-प्रवर्तन करवाया । तभी अकबर के पास से श्री शांतिचंद्र उपाध्यायजी महाराजने पूरे वर्ष में अलग-अलग मिलाकर छः मास का अमारिका फरमान निकलवाये ! किस के पास ? मुसलमान के पास !

अकबर यानि कौन पहचानते हो ?

4) जिसने चितौड़में घोर हत्याकांड किया था (2) जिसने लाहोर के जंगल प्रदेश में जंगली पशुओं पर क्रूर कत्लेआम किया था । (3) जिसको हररोज चिडियाँकी सवाशेर जीभ की तरकारी खाने को चाहिए । इसने भी ये छोडा । उपरांत छः मास पूरे राज्यमें अमारि फैलाई । और हिंसार्थ पकडे लाखों पंखीओं को अभयदान दिया । क्या आप तिथिपे और महापर्वमें आपके घर में अमारि फैलाओगे ?

अकबर कैसे दयालु बना ? जानते हो ?

ऐसी घटना बनी कि, दिल्ली में चंपा श्राविका छः मास के उपवास कर रही थी । एकांतर को नहीं, सतत लगातार छः मास के उपवास ! ज्यादा उपवास होने पर उसको पालकी में उठाकर लोग जिनमंदिर ले जा रहे थे । पालकी के आगे दो भतीजे-भानमल और टोडरमल चल रहे थे, जो बादशाह के अमलदार थे । एकबार सामने से अकबर की सवारी आ रही थी । इसलिए पालकी खड़ी रही । बादशाहने दोनों को पूछा कि, "अरे ! आप लोग एक औरत के आगे खुले पैर क्यों चल रहे हो ?"

मुस्लिम धर्म में औरत की कोई किंमत नहीं । इसलिए ऐसा पूछा । उन दोनोंने कहा, "जहांपनाह ! ये हमारी फूफी है । उसने सतत छः महिने के उपवास किये हैं, इसलिए उनको मंदिर ले जा रहे हैं ।" ऐसा सुनकर बादशाह चौंक गया । उनको एक रोजा वह भी सिर्फ दिन में करने का होता है - वह भी भारी पड़ता था । ऐसा सुनकर उन्होंने परीक्षा करने के लिए कहा, "ऐसा है ? तो मुजे मेरे महल में उनकी सेवा करने का लाभ दिजीए ।"

तय हुआ; महा तपस्विनी चंपाबाई को बादशाह के महल में रखा गया । बादशाहने खानगी बीबीओं का पहरा रखा, लेकिन वहाँ कुछ खाने का आता नहीं था । बीबीओंने कहा, "यहाँ तो यह औरत सिर्फ 3-4 बार उबला हुआ पानी पीती है, बाकी माला गिनती है और प्रार्थना करती है ।"

म्लेच्छ बादशाहने आकर चंपाबाई को पूछा कि, "माई ! इतने सारे उपवास किस तरह कर सकती हो ?" चंपाबाईने कहा, "जहांपनाह ! ये शक्ति तो देव-गुरु के प्रसाद से ही प्राप्त होती है ।" बादशाह पूछता है, "कौन देव और कौन गुरु ?"

बाईने कहा, "देव हमारे 18 दूषण रहित, 12 गुणो से अलंकृत देवाधिदेव अरिहंत तीर्थंकर भगवान है और गुरु आचार्य भगवंत विजय हीरसूरीश्वरजी महाराज हैं ।" बादशाह पूछता है - "कहाँ है वे ?"

चंपाबाई कहती है, "अरिहंत श्री महावीर भगवान आदि तो मोक्ष में पधारे है, और श्री सीमंधर भगवान आदि अभी बहुत दूर महाविदेह क्षेत्र में विचरते हैं । गुरु देव पू. आचार्य महाराज वर्तमान में गुजरात में विचर रहे हैं ।

सोचो कि, ये चंपा श्राविका का हृदय धर्म के रंग से कैसा रंग गया होगा और महापुरुषों की ओर उनको कितना सद्भाव होगा । इस तरह से कब बोला जाय ? बादशाह के आगे देव-गुरु का वर्णन किया जाता है । बादशाह सोचते हैं कि इतने दूर जिस की छाया का प्रभाव है; वे गुरु कैसे होंगे ? तबसे अकबर के हृदयमें पू.आ.श्री हीरसूरीश्वरजी स्थान प्रस्थापित हो जाता है । आगे पू.आ. श्री हीरसूरिजी के दर्शन की उत्कंठा होनेपर उन्हें बुलाने के लिए विनंतीपत्र भेजा ।

बादमें बादशाहने गुजरात के सूबा को सेवक द्वारा फरमान भेजा, "हाथी, घोडे, रथ, पालकी आदि सामग्री देकर आचार्य हीरसूरिजी महाराज को दिल्ली भेजो ।" सूबाने सेवक को खंभात आचार्य म. के पास भेजा । वहाँ अग्रणी श्रावक शेठ रामजी डर गए । **सेवक को बक्षिस देकर कहा, "जाओ और कहो आचार्य साहब बीमार है ।"**

सेवक वापस गया । कुछ दिनों के बाद बादशाहने फिरसे दूजा आदमी भेजा । उसको वैसेही वापस लौटा दिया । लेकिन बादमें एक बार एक घांची बादशाह की शैयामें सोया हुआ पकड़ा गया । बादशाहने उसे पूछा, "तू यहाँ कैसे ?" घांचीने

कहा, "मेरे घरमें खुदाईकाम करते एक दियट (चिरागदान) मिली, इसमें तेल डालकर जलाया तो इसमेंसे चार ओलिये(भूत) प्रकट हुए और सेवा माँगने लगे । मैंने आपका शैयावास दिखाने को कहा । उन्होंने मुझे यहाँ रख दिया । मैं आपकी शैया में जरासा सोया और नींद आ गई । मुझे माफ करें, फिरसे मैं ऐसा नहीं करुँगा ।"

बादशाहने माफी दे दी लेकिन बदलेमें दिवट मंगवाकर प्रगटाया । ओलिये को पूछा, "आचार्य हीरसूरीश्वरजी महाराज की तबीयत कैसी है ?"

वे बोले, "तबीयत तो बहुत अच्छी है । लेकिन आपके आदमी लाँच खाकर आपको जूठा कहते थे कि, वे बीमार है ।

बादशाहने बादमें फरमान करके दूसरे सेवक को भेजा । वह खंभात गया । रामजी शेठ उसके साथ रकझक करते थे, वहाँ आचार्य महाराजने उनको देखा । उनको अंदर बुलाकर पूछा । आगंतूक सेवक कहता है, "बादशाह आपके दर्शन इच्छते है ।" घबराये हुए रामजी शेठ को आचार्य महाराज कहते है, "डरना क्या है ? हम निष्परिग्रही, हमारे पास से उनको क्या लेना है ? घबराओ नहीं, विहार करते करते जाएँगे । हमारे दर्शन से कहीं वह प्रसन्न होकर शासन को उपयोगी हो जाय ।"

आचार्य महाराज विहार करते करते दिल्ली पधारे । श्रावकोंने भव्य स्वागत किया । बादशाहने सामैया को महल पर आमंत्रित किया । महल के अंदर प्रवेश करते समय कार्पेट परसे चलने की पू. आचार्यश्रीने अनिच्छा जताई । कार्पेट का एक छौर उपर करने से नीचे चींटियाँ दिखाई दी । इस तरह बादशाह पहले ही प्रसंग से जैनधर्म की जीवदया प्रति आकर्षित हुआ ।

बादमें बादशाह को आचार्य महाराज की मुलाकातों में अरिहंत भगवान, जैनधर्म, दया, दान, शील, तप आदि का सामान्य से और जीवदया का विशेष से बहुत सारा ज्ञान मिला । बादशाहने खुब खुश होकर कहा, "आपने इतने दूर गुज़रात से मेरे लिए चलकर आने का कष्ट दिया । मैंने आपके लिए क्या किया ? मेरे लिए आप सेवा फरमाईये ।

आचार्य महाराजने कहा, "हम निर्ग्रन्थ साधु, हमें कुछ नहीं चाहिए ।" बाद में बादशाह के खूब आग्रह करने पर आचार्य महाराजने पर्युषण के आठ दिन पूरे राज्य में अमारि-अहिंसा का पालन करने की माँग रखी । बादशाहने इसमें आगे-पीछे के दो-दो दिन अपनी ओरसे बढ़ाकर बाहर दिन की अमारि स्वीकार ली । अपने पाँचो

राज्य - गुजरात, पंजाब, मारवाड, मेवाड, मालवा, अजमेर से जयपुर, यु.पी., दिल्ली, पर फरमान निकालें । बाद में बादशाहने बर्षाकालमें जैनधर्म का ज्ञान खूब सूना । बादशाह बार बार आचार्य महाराज को कहता कि, "ये तो आपने जीवों की दया माँगी । आपकी कोई सेवा नहीं बताई, आप मेरे आग्रा का बड़ा भंडार स्वीकार करें ।" हम कुछ भी परिग्रह हमारे पास नहीं रखते, आग्रा के संघ को दे दीजिए । ऐसा कहकर आग्रा के संघको बुलाकर ज्ञानभंडार दे दिया । आचार्यदेव की निस्पृहता से बादशाह ज्यादा से ज्यादा भक्त बनने लगा । एकबार बादशाहने अपना हाथ दिखाकर भविष्य जानने की ईच्छा व्यक्त की । आचार्य महाराजने कहा, "यह हमारा विषय नहीं है । हमें तो संयमित धर्मशास्त्र पढ़ना हैं और लोगों को ये शास्त्रो में से धर्म का उपदेश देना है ।"

बादशाह की बेताबी बढ़ती चली । एक बार ऐसे बड़े आचार्य महाराज क्या खाते होंगे ये जानने के लिए वे खुद खानगीमें देखने गया । उन्होंने देखा, लुख्खी रोटी, लुख्खे चावल ! उनको आश्चर्य हुआ ! ओहो ! दो-दो हजार शिष्यों के गुरु ऐसा रूखा-सुखा खाते हैं । आश्चर्य....

अनेक कोस के विस्तारवाले डाबर नामक बड़े सरोवर के पास जाकर; साधुओं की समक्ष अपने हाथ से अलग अलग देश के लोगों से भेंट मीले पक्षीयों को, कि जो पींजरे में थे, उन सबको छोड़ दिया । कैदी लोगोंमें से कई लोगों के बंधन दूर किये । अर्थात् कैदखानेमें से कैदीयों को रीहा कीया ।

सूरिजी के समागम से बादशाह को धर्मश्रवणमें रस लगा । सूरिजीने विहार की तैयारी की । विहार का समय नजदीक आते ही बादशाहने बिनती की, "महाराज, आपको मैं विहार करने नहीं रोक सकता, लेकिन हमको धर्म सुननेमें नहीं आयेगा । तैयार हुआ धर्मरूपी बगीचा सूख जायेगा, इसलिए धर्म सूनाने के लिए एक समर्थ शिष्य को रखकर जाने की कृपा कीजिए । दिल्ली के सम्राट को अब रोज धर्मकथा सूननी थी । इसलिए उन्होंने साधु देने की बिनती की । बादशाह की प्रार्थना से विहार के समय बादशाहने धर्म सूनाने जंबूद्विप प्रज्ञप्ति के टिकाकार तथा पश्चिम दिशा के अधिपति वरुणदेवने जिनको वरदान दिया है ऐसे समर्थ विद्वान गीतार्थ और धर्मोपदेशक उपाध्याय श्री शांतिचंद्रजी को धर्मापदेश सुनाने वहाँ रखें । असल में उन्होंने वहाँ दयारूपी वेल को बोया था ।

"जैन शासन का चमकता सितारा" में से साभार

B. पंजाब कैसरी आचार्य श्रीमद् विजय वल्लभसूरिजी म.सा. की जीवन झाँखी

"दुःखाब्धो मज्जतां सर्व, जनानां शांतिदायिने,
जैनशासन स्तंभाय, नमो वल्लभ सूरये ।।"

धूपबत्ती अपने आप जलकर सौरभ देती है, चंदन खुद घिसकर दूसरों को शीतलता देता है, पुष्प अपने आप मुरझाकर दूसरों को सुवास देता है । इस तरह महापुरुषों के जीवन भी अनेक झंझावतों से गुजरता है । जो जन्म लेता है, वह मृत्यु को भी वरता है । यह विश्व का एक अफ़र और सनातन नियम है । लेकिन जीवन को जो फूल की तरह सुवाससे महकाते है, उनके नाम इतिहास के पन्नों पर अमर हो जाते हैं ।

महापुरुषों हरवक्त "नन्हें को इनाम, बड़े को मान और सबका करो सन्मान" की भावनावाले होते हैं । वे लोग कहीं भी जन्मे हो, कहीं भी उनका लालन-पालन हो और शिक्षा भी कहीं भी ली हो तो भी समग्र देश उनका अपना वतन बन जाता है । उनकी सेवा भावना को किसी प्रदेश की सीमा बंदी नहीं बना सकती । श्री दयानंद सरस्वती गुजरात में जन्मे तो भी सारे भारत की उन्होंने सेवा की । श्री सहजानंद स्वामी उत्तरप्रदेश में जन्मे लेकिन उनका सेवाक्षेत्र कच्छ और गुजरात आदि थे । पू. आत्मारामजी म. की जन्मभूमि पंजाब थी । लेकिन कर्मभूमि गुजरात, सौराष्ट्र आदि थी । इस तरह गुरु वल्लभसूरीश्वरजी की जन्मभूमि गुजरात थी और कर्मभूमि राजस्थान, मेवाड, पंजाब थी ।

गुजरात के वडोदरा शहर में वि.सं. 1927 कार्तिक सुदी दूज (भैयादूज) के शुभ दिनपे श्रीमाली परिवारमें धर्मप्रेमी श्री दीपचंदभाई के कुटुंब में धर्मपरायण माता ईच्छाबहन की कुक्षीसे उनका जन्म हुआ था । उनका नाम छगनभाई रखा गया । बाल्यकाल में ही पिताजी की छत्रछाया छीन गई । माता-पिता धर्म के रंग से रंगे हुए थे । इसलिए बच्चों में बचपन से धर्मसंस्कार के बीज बोये थे । माता जब मरणशैया में थी तब उन्होंने अपने संतानों को अरिहंत शरण लेने की शिख दी । बालक छगन जब दुःखी बनकर माता के पास बैठे थे तब माताने सांत्वना दी कि मैं तुझे तीर्थंकर के चरण में सौंपती हूँ । और माता का वह संदेश उनके जीवन

में तानेबाने की तरह बुन गया और जिंदगी के अंतिम समय तक उन्होंने उसका पालन करके अपना जीवन तिर्थंकरके चरणों में समर्पित किया ।

उसी समयमें वि.सं. 1942 में उनको वडोदरा में पू. आत्मारामजी म. की वैराग्यसभर वाणी सुनने का अवसर मिला । ये बानी छगनभाई के हृदय को छू गई । और माता की अंतिम आज्ञा का पालन करने के लिए अंतरात्मा जागृत हुआ । वडीलबंधुओं का विरोध होते हुए भी उन्होंने कसौटीमें से पसार हो कर वि.सं. 1943 के वैशाख सुद-13 के दिन धर्मनगरी राधनपुरमें पू.आ. श्री विजयानंदसूरीश्वरजी म.सा. के वरद हस्तसे चारित्र ग्रहण किया । और उनके प्रशिष्य पू. मुनिश्री हर्षविजयजी के शिष्य बने । उनका नाम मुनिश्री वल्लभविजयजी रखा गया । दीक्षा ग्रहण करने के बाद मुनिश्री वल्लभविजयजीने अपने चित्त की एकाग्रता अभ्यास में, आचारपालनमें और दादागुरु श्री आत्मारामजी म. की सेवाभक्ति में लगा दी; जैसे कि वे दादागुरु की काया की छाया बन गये । थोड़े ही समय में व्याकरण, काव्य और आगमों का गूढ़तम अभ्यास करके जैन समाज में ही नहीं लेकिन जैनेतर समाज में भी अप्रतिम विद्वान के रूपमें स्वयं प्रसिद्ध होय गये । गुरु वल्लभने थोड़े ही समय में गुरुजी की छत्रछाया गँवाई । दिल्ली में गुरु श्री हर्षविजयजी म. का वि.सं. 1946 में कालधर्म हुआ । गुरु वियोग की गहरी वेदना हुई और स्वयं जल्दी से विहार करके पंजाबमें पू. दादागुरु आत्मारामजी म. के चरणकमल में आ गये । और तबसे दादागुरु की सेवा में निरंतर हाजिर रहे । उनके मार्गदर्शन से गाँव-गाँव और शहर-शहर विचरते हुए उन्होंने गुरु के संदेश की सौरभ फैलाई ।

"वसुधैव कुटुम्बकम्" उनके जीवन का सूत्र था । ईस सूत्र को हमेश के लिए दृष्टि समक्ष रखकर जैन-जैनेतर के भेदभाव रखे बिना गरीब-तवंगर, राजा-रंक, हिन्दु-मुसलमान सबको वीतराग देव का संदेश सुनाया । उनके जीवन के तीन मुख्य ध्येय थे-शिक्षा प्रचार, एकता और साधर्मिक वात्सल्य । वे कहते थे कि सांप्रदायिकता दूर करके जैनसमाज सिर्फ वीरप्रभु के झंडे के नीचे एकत्र हो कर प्रभु के शासन को उजागर करें तो मैं मेरा आचार्यपद छोड़ने को तैयार हूँ । शिक्षाप्रचार के लिए भी उन्होंने सोचा कि व्यावहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा की भी आवश्यकता है । जो धार्मिक शिक्षा नहीं देंगे तो आर्यसंस्कृति के

संस्कार छिन्न-भिन्न हो जायेंगे । इस तरह 50 साल पहले जैनसमाज की नब्ज परखकर भाविपिढ़ी को सन्मार्ग की ओर ले जाने के लिए उन्होंने मुंबई में एक उच्च शिक्षण संस्था की स्थापना करने की प्रेरणा दी । इस संस्था में भी अपना या किसी व्यक्ति का नाम न लगाकर सभी जैनों के इष्ट परमात्मा महावीर का नाम जोड़ दिया । विद्यालय की आज जगह जगहपे अनेक शाखाएँ हुई है । जिसमें हजारों विद्यार्थी पढ़कर तैयार हुए हैं । पंजाब, राजस्थान आदि स्थलोंपे जगह जगह शिक्षण संस्थाएँ खड़ी करके पू. आत्मारामजी म. का अंतिम संदेश शिरोधार्य किया । पू. आचार्यश्री को नारीशक्ति की जानकारी थी, इसलिए उसके उत्कर्ष के लिए कन्याशिक्षण की महत्ता बताते हुए कहा कि तीर्थंकरों, संतों, महंतो की जन्मदात्री एक माता सो शिक्षक के बराबर है । शिक्षित संस्कारी माता अपने बच्चों को संस्कारी बनाएगी । हमने लडकों के लिए नई नई संस्थाएँ खड़ी की और लाखों रूपये खर्च करते हैं । लेकिन कन्याओं की कभी चिंता नहीं करते । यही हमारी भूल है । उनके लिए भी गुरुकुल, छात्रालय होने चाहिए । ऐसे विचार रखकर राजस्थान में वरकाणा जैसे क्षेत्रोमें कन्या छात्रालय खड़े किये ।

साधर्मिक के प्रति भी उनकी इतनी ही सहृदयता थी । मेरा एक भी साधर्मिक भूखा न रहे, अशिक्षित न रहे, बिना घरका न रहे, ऐसी उनकी अभिलाषा थी । वे कहते कि जब समाज में कोई भी श्रावक के पास खाने के लिए पूरता अन्न न हो और पहनने के लिए पूरते वस्त्र भी न हो उस समय सिर्फ मिष्टान्न बनाकर उनको खिलाना वह सच्चा वात्सल्य नहीं है । ऐसे समय में लक्ष्मी का सद्व्यय करके उसे अपने पाँव पर कायम के लिए खड़ा रह सकें इसलिए फंड जमा करना चाहिए । धर्म को टिकानेवला साधर्मिक है । जब मुंबई में तीन वर्षाकाल किये तब एकबार घाटकोपर, चिक्रोली आदि स्थल की झोपड़ियों में गोचरी लेने गये । वहाँ एक सामान्य गृहिणी की छोटी बालिकाने अठ्ठाई की थी । वह गरीब थी इसलिए पू. आचार्यश्री को बिनती करते हुए कहा कि "आप जैसे महान आचार्य श्रीमंतों के हैं, हम जैसे गरीबों के यहाँ कहाँ आते हो ?" तब पू. गुरुदेवने कहा कि, "बहन, तेरे मनमें ऐसे विचार कहाँ से आया ? यह भूल तेरी नहीं, यह भूल हमारी है । हमने श्रीमंतो के घरमें से गोचरी-पानी लाने लगे और गरीबों के घरमें दृष्टि नहीं की तब तुझे ऐसा विचार आया ।" पू. गुरुदेव पहले उसके यहाँ गये । और उसकी समक्ष

प्रतिज्ञा की कि आजसे जब तक साधर्मिकों का उद्धार न करूँ तब तक मिष्टान्न का त्याग करुंगा । वे अपने प्रत्येक प्रवचन में मध्यम और गरीब वर्ग के उत्कर्ष के लिए कोई ठोस काम करने के लिए कहते ।

उनकी बाणी में अमृत सी मीठाश थी । उनके प्रवचनों में सच्चाई गूँजती थी । और उनकी प्रतिभा में अद्‌भूत तेज था । इस अद्‌भूत प्रतिभाने और अमृतवाणीने अनेक चमत्कार सर्जन किये । जीवन में ब्रह्मचर्य का पालन भी अजब था । जिसके प्रताप से आँख का तेज न होते हुए भी किसी के पगरव से ही वह व्यक्ति कौन है वह कह देते । उनकी एक अपनी शक्ति और दिव्य प्रतिभा थी ।

उनके जीवन में त्याग भी महान था । हररोज दवा, पानी सहित 10 ही द्रव्यों से ज्यादा कुछ लेते नहीं थे । पूज्यश्री को मनुष्यों तो क्या तिर्यंच भी इतना ही चाहते थे । पू. गुरुदेव पालीताणा की यात्रा करके वडोदरा श्री शत्रुंजय तीर्थावतार जिनालय की प्रतिष्ठा करने के लिए पधारे । उस समय मुंबई के गोडीजी उपाश्रय के ट्रस्टी पू. गुरुदेव का आँखका ऑपरेशन करवाने के लिए मुंबई पधारने की बिनती करने आये । मुंबई की ओर विहार करने का तय हो गया । उस समय डभोई संघ की भी आग्रहसभर बिनती होने के कारण और पू. गुरुदेव को भी श्री लोढ़ण पार्श्वनाथ प्रभु के दर्शन करने की उत्कट भावना थी इस वहज डभोई होकर मुंबई जाने का तय करके उन्होंने डभोई की ओर विहार किया । वहाँ रास्ते में से एक कुत्ता साथमें हुआ । और मुंबई तक साथमें ही रहा । गुरुदेव जहाँ जहाँ जाते कुत्ता साथमें ही रहता । पू. गुरुदेवने अंतिम तीन वर्षाकाल मुंबई में किये । वहाँ भी वह गुरुदेव के निकट में रहता । हमेशां हमारी तरह वह गुरुदेव को नतमस्तक से नमन करता, मुंबईमें जहाँ जहाँ गुरुदेव के व्याख्यानदि प्रसंग होते वहाँ वह कुत्ता सर्व प्रथम पहुँच जाता ।

पू. गुरुदेव को अंतिम थोड़े समय के लिए तबियत की प्रतिकूलता के कारण कांतिलाल इश्वरलाल के बंगले पे रहने का हुआ । वहाँ भी यह कुत्ता साथमें ही था । लेकिन वह अपने आहार-निहार की क्रिया बाहर करके आता और बंगले की किसी भी चीजको स्पर्श नहीं करता था । सं. 2010 के भादों वदी-10 की काजलघेरी रात्रिका संकेत सबसे पहले कुत्ते को हुआ । गुरुदेव की स्वस्थ अवस्था होते हुए भी वह संध्या समय से रुदन कर रहा था । लेकिन किसीको इस बात का

खयाल नहीं आया । पू. गुरुदेव के कालधर्म के बाद भी वह कुत्ता तीन साल तक प्रत्येक मास की वदी-11 के दिन जहाँ भायखला गुरुदेव का अग्निसंस्कार स्थान है वहाँ समाधिमंदिरपे जाता था । और दर्शन, वंदन करके आँसु बहाकर वहाँ रखे गए प्रसंग को देखकर अपने स्थान मरीन ड्राइव पे वापस आ जाता । आश्चर्य तो इस बात का है कि गुरुदेव की तीसरी स्वार्गारोहण तिथि के दिन भायखला समाधिमंदिर के दर्शन करके वापस लौटते समय ट्राम के नीचे आ जाने से घायल होने से उसकी मृत्यु हुई । उसके लिए भी वही दिन यानी भादों वदी 11 अंतिम दिन था । उस समय उस ट्राम में मरीनड्राइव के युवान बैठे थे जो इस कुत्ते से तीन साल से परिचित थे । उन्होंने ये करुण दृश्य देखा और उसको पहचान लिया । तुरंत ही ट्राममें से उतरकर कुत्ते को अस्पताल ले गए । लेकिन उसको तो पू. गुरुदेव को मिलने की जल्दबाज़ी थी, इसलिए उसका प्राणपंछी गुरुदेव को मिलने उड़ गया । उसकी पुण्यस्मृति के लिए जीवदयाफंड तथा पूजा आदि प्रसंग का आयोजन किया गया । इस तरह तिर्यंच पर भी गुरुदेव के चरित्र का प्रभाव अजब था ।

पूज्यश्री के धार्मिक, सामाजिक कार्यों को देखकर पूरा जैन समाज प्रभावित हो गया था । वे संपूर्ण जैन समाज के तो प्राण थे ही साथ साथ जैनेतरों के भी प्राणाधार थे । इस कारण से संपूर्ण समाज उनको पदवी से विभूषित करना चाहता था। । जब जब वे आचार्य पदवी लेने का आग्रह टालते तब एक ही जवाब देते, "मुझे पदवी नहीं, काम दो ।" लेकिन श्री संघोके अति आग्रह से वि.सं. 1981 में लाहोर मुकामपे उनको आचार्य पदसे विभूषित किया गया । वि.सं. 1989 में ब्राह्मणवाडामें मिले पोरवाड सम्मेलनमें "कलिकाल कल्पतरु और अज्ञानतिमिर तरणी" पदवी उनको एनायत की गयी । उनके मन शासन प्रभावना और समाज उत्कर्ष का कार्य ही सच्ची पदवी थी ।

पू. गुरुदेव खादी का उपयोग करते थे । उसकी लोगों पर ऐसी असर हुई कि एकबार उनके स्वागत में सभी लोग-खादी पहनकर आये थे । उनमें श्रमणधर्म के जो मूलभूत गुण होते हैं, जैसे कि क्षमा, निराभिनता, सरलता, सेवा आदि गुणों के भंडार थे । अपने जीवन की अंतिम क्षण तक वे स्व-पर का कल्याण करते रहे ।

इस तरह निर्मल चारित्र जीवन का पालन करते 84 साल की प्रौढवयपे वि.सं. 2010 के भादों वदी-10 की रातको 2.32 कलाकपे नमस्कार महामंत्र का स्मरण

करते मुंबई नगरी में समाधिपूर्वक उनका आत्मा उच्च स्थान के लिए विदा हुआ । जिनका जीवन उज्जवल हो उनका मृत्यु भी महोत्सव बन जाता है । पू. गुरुदेव का व्यक्तित्व निराला था । अपनी साधुता को सुशोभित करके उन्हों ने तीर्थंकर परमात्मा के धर्म का गौरव बढ़ाया था । और एक योगसाधक आत्मा की तरह अपने जीवनको कृतार्थ किया था । धन्य है इस शासन शणगार, अरिहंत अणगार गुरुदेव को !

7. काव्य विभाग

1. गिरुआ रे गुण तुम तणा

गिरुआ रे गुण तुम तणा, श्री वर्धमान जिनराया रे,
सुणतां श्रवणे अमी झरे, म्हारी निर्मल थाये काया रे .....गि० 1
तुम गुण गण गंगा जले, हुं झीली निर्मल थाउँ रे,
अवर न धंधो आदरुं, निशदिन तोरा गुण गाउँ रे..... गि० 2
झील्या जे गंगाजले, ते छिल्लर जल नवि पेसे रे,
जे मालती फूले मोहिया, ते बावल जइ नवि बेसे रे..... गि० 3
एम अमे तुम गुण गोठशुं, रंगे राच्या ने वली माच्या रे,
ते केम परसुर आदरे, जे परनारी वश राच्या रे..... गि० 4
तुं गति तुं मति आशरो, तुं आलंबन मुज प्यारो रे,
वाचक यश कहे माहरे, तुं जीव जीवन आधारो रे..... गि० 5

2. सेवो भवियां विमल जिणेसर

सेवो भवियां विमल जिणेसर, दुल्लहा सज्जन संगाजी,
एहवा प्रभुनुं दरिसन लेवुं, ते आळसमांहे गंगाजी..... सेवो० 1
अवसर पामी आळस करशे ते मूरखमां पहेलोजी,
भूख्याने जेम घेबर देतां, हाथ न मांडे घेलोजी..... सेवो० 2
भव अनंतमां दर्शन दीठुं, प्रभु एहवा देखाडेजी,
विकट ग्रंथि जे पोळ पोळियो, कर्म विवर उधाडेजी..... सेवो० 3

तत्त्व प्रीतिकर पाणी पाए, विमला लोके आंजिजी,
लोयण गुरु परमान्न दिए तव, भ्रम नांखे सवि भांजिजी.....सेवो० 4
भ्रम भांग्यो तव प्रभुशुं प्रेमे, वात करुं मन खोलीजी,
सरला तणे जे हरडे आवे, तेह जणावे बोलीजी..... सेवो० 5
श्री नयविजय विबुध पय सेवक, वाचक 'यश' कहे साचुंजी,
कोडि कपट जो कोइ दिखाये, तोही प्रभु विण नवि राचुंजी.....सेवो० 6

मान की सज्झाय

रे जीव मान न कीजिये; मान विनय न आवे रे,
विनय विना विद्या नहीं, तो किम समकित पावे रे ....सेवो० 1
समकित विण चारित्र नहीं, चारित्र विण नहिं मुक्ति रे,
मुक्तिनां सुख छे शाश्वता, ते केम लहीए जुक्ति रे....सेवो० 2
विनय वडो संसारमां, गुणमांहे अधिकारी रे,
माने गुण जाए गळी, प्राणी जोजो विचारी रे ....सेवो० 3
मान कर्युं जो रावणे, ते तो रामे मार्यो रे,
दुर्योधन गर्वे करी, अंते सवि कहार्यो रे ....सेवो० 4
सुकां लाकडा सारिखो, दु:खदायी ए मोटो रे,
उदय-रत्न कहे मानने, देजो देशवटो रे ....सेवो० 5

परमात्मा की अष्टप्रकारी पूजा के दोहे

1. जलपूजा

नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व-साधुभ्य:

(यह सूत्र सिर्फ पुरुषों को ही हरेक पूजा के पहले बोलना)

(दूध का प्रक्षाल करते समय बोलना)

मेरुशिखर न्हवरावे, हो सूरपति मेरुशिखर नवरावे,
जन्मकाल जिनवरजी को जाणी, पंचरुप धरी आवे, हो... सु.....1
रत्न प्रमुख अडजातिना कलशा, औषधि चूरण मिलावे,
क्षीरसमुद्र तीर्थोदक आणी, स्नात्र करी गुण गावे,हो... सु.....2

एणि परे जिन प्रतिमा को न्हवण करी, बोधीबीज मानुं वावे,
अनुक्रमे गुणरत्नाकर फरसी, जिन उत्तम पद पावे,हो... सु.....3

(पाणी का प्रक्षाल करते समय बोलना)

जल पूजा जुगते करो, मेल अनादि विनाश,
जल पूजा फल मुज हजो, मांगो एम प्रभु पास
ज्ञान-कलश भरी आत्मा, समतारस भरपूर,
श्री जिनने नवरावतां, कर्म होये चकचूर।

ॐ ह्रीं श्रीं परमपुरुषाय परमेश्वराय जन्म-जरा-मृत्यु-निवारणाय श्रीमते जिनेन्द्राय जलं पूजा यजामहे स्वाहा ।

2. चंदन पूजा

शीतल गुण जेहमां रह्यो, शीतल प्रभुमुख रंग,
आत्म शीतला करवा भणी, पूजो अरिहा अंग
ॐ ह्रीं श्रीं..... **चंदनं...**

3. पुष्प पूजा

सुरभि अखंड कुसुम ग्रहि, पूजो गत संताप,
सुमनजंतु भव्य ज परे, करीए समकित छाप,
पांच कोडिने फूलडे, पाम्या देश अढ़ार
राजा कुमारपालनो वर्त्यो जय जयकार.
ॐ ह्रीं श्रीं.... **पुष्पा....**

4. धूपपूजा

ध्यानघटा प्रगटावीए, वामन नयन जिन धूप,
मिच्छित्त दुर्गंध दूर टले, प्रगटे आत्म-स्वरूप,
अमे धूपनी पूजा करीए रे, ओ मन मान्या मोहनजी,
प्रभु धूपघटा अनुसरीए रे, ओ मन मान्य मोहनजी.
प्रभु नहीं कोइ तमारी तोले रे, ओ मनमान्या मोहनजी,
प्रभु अंते छे शरण तमारुं रे, ओ मनमान्या मोहनजी ।
ॐ ह्रीं श्रीं.... **धुपं**....स्वाहा

5. दीपक पूजा

द्रव्य दीप सुविवेकथी, करतां दुःख होय फोक,
भाव प्रदीप प्रगट हुए, भासित लोकालोक,
ॐ ह्रीं श्रीं.... **दीपं**....स्वाहा

6. अक्षत पूजा

शुद्ध अखंड अक्षत गृहि, नंदावर्त विशाल,
पूरी प्रभु सन्मुख रहो, टाली सकल जंजाला ।
ॐ ह्रीं श्रीं.... **अक्षतं**....स्वाहा

(साथिया करते समयपे भावना करने के दोहे)

अक्षतपूजा करतां थकां सफल करुं अवतार,
फल मांगु प्रभु आगले, तार एतार मुज तार 1
सांसारिक फल मांगीने, रझडयो बहु संसार,
अष्ट कर्म निवारवा, मांगु मोक्षफल सार. 2
चिहुंगति भ्रमण संसारमां, जन्म मरण जंजाल,
पंचमगति विण जीवने सुख नहि त्रिहुं काल. 3
दर्शन-ज्ञान-चारित्र ना, आराधनथी सार,
सिद्धशिलानी उपरे, हो मुजे वास श्रीकार. 4

7.नैवेद्य पूजा

अणाहारी पद में कर्यां, विग्गह गइअ अनंत,
दूर करी ते दीजिए अणाहारी शिव संत
न करी नैवेद्य पूजना, न धरी गुरुनी शीख
लेशे परभव अशाता, घर घर मांगशे भीख ।

(साथिये पर साकर, पतासा और उत्तम मिठाई घरसे बनाकर शुद्धरुपसे रखना । पीपरमीन्ट, चोकलेट नहीं रखना ।)

8. फलपूजा

इन्द्रादिक पूजा भणी, फल लावे धरी राग,
पुरुषोत्तम पूजी करी, मागे शिवफल त्याग ।

ॐ ह्रीँ श्रीँ.... **फलं**....स्वाहा

(श्रीफळ, बादाम, सुपारी और पक्के उत्तम फल सिद्धशिला पर रखना ।)

चामर पूजा का दोहा

बे बाजु चामर ढाले, एक आगळ वज्र उलाळे,
जइ मेरु धरी उत्संगे, इन्द्र चोसठ मळीया रंगे,
प्रभु पासनुं मुखडुं जोवा, भवोभवनां पातिक खोवा ।

दर्पण पूजा का दोहा

प्रभु दर्शन करवा भणी, दर्पण पूजा विशाल,
आत्मदर्शनथी जुए, दर्शन होय तत्काल ।

8. तीर्थ परिचय

श्री देलवाडा(आबु) तीर्थ (श्री आदीश्वर भगवान)

समुद्र सपाटीसे अंदाजीत 1220 मीटर की ऊँचाई पर आबु पर्वत की गोद में बसा हुआ देलवाडा तीर्थ सीर्फ भारत का ही नहीं, लेकिन समग्र विश्व के महान और दर्शनीय तीर्थों में से एक है । यहाँ के मंदिरों में रेखांकित की गई शिल्पकला देशवासी या विदेशी को एकसी मोहित करती है । इसमें भी शिल्पकलामें विमलवसही की बराबर कर सके ऐसा कोई मंदिर समग्र भारत में नहीं है । इस मंदिर के निर्माण के साथ तीन प्रतापी जैन ज्योतिर्धर संकलित है, वे है विमल शाह, वस्तुपाल और तेजपाल । गुजरात के राजा भीमदेव के मंत्रीश्री विमलशाह ने वि.सं. 1088 में उस समय के 18 क्रोड 53 लाख रुपये खर्च करके इस मंदिर का निर्माण किया था । विमलवसही के नामसे जगविख्यात इस मंदिर का जीर्णोद्धार भी होता रहा । विमलवसही मंदिर की छत्तें, गुंबज, दरवाजे, स्तंभ, तोरण और दिवालों के नेत्रदिपक और ऐश्वर्ययुक्त नक्शी की कोमलता और बारीकी का वर्णन शब्दों से नहीं किया जा सकता । इस मंदिर के सामने ही वि.सं. 1287 फागुन वदि 3 के दिन वस्तुपाल-तेजपालने 13 क्रोड 55 लाख रुपये खर्च करके लावण्यवसही के नामसे पहचाने जानेवाले मंदिरों की प्रतिष्ठा श्री विजयसेनसूरीश्वरजी के हाथोंसे कराई । दोनों भाई वीर और उदार थे । वस्तुपाल स्वयं कवि थे । इस लावण्यवसही की रचना, उसकी बारीक नक्शी और शिल्पमें से नीतरता लावण्य अद्‌भूत है । भगवान श्रीकृष्ण जीवन, नर्तकियाँ और गायिकाओं का समूह, देवरानी-जेठानी के गोखले की आकृतियाँ, सब यहाँ की विशेषता हैं । इसके अलावा यहाँ पितलहर मंदिर, श्री महावीर भगवान मंदिर और खरतर वसही मंदिर भी है । जैन शास्त्रानुसार यह एक प्राचीन और महत्त्वपूर्ण तीर्थ है ।

श्री राणकपुर तीर्थ (श्री आदीश्वर भगवान)

नन्हीसी मधाइ नदी के पास और अरवल्ली की गिरिमाला की गोद में वसे हुए राणकपुर तीर्थ में प्रकृति का स्वाभाविक सौंदर्य और मानवसर्जित शिल्पकला का अद्‌भूत समन्वय हुआ है । विस्तार की बाबत में जैन तीर्थों में अजोड़ ऐसा

श्री राणकपुर तीर्थ 313 फीट चौड़ा और 290 फीट लम्बा है । इसमें हवा-उजाले की जो व्यवस्था की गई है, वह देशविदेश के स्थपतियोंको आश्चर्यमुग्ध करती है । मूलनायक भगवान की श्वेत वर्ण की लगभग 180 से.मी. ऊँची पद्मासनस्थ प्रतिमा अति प्रभावक है । पू.आ. सोमसुंदरसूरि म. सा. की प्रेरणा से धर्मपरायण धरणाशाहने नलिनीगुल्मविमान शैली का यह जिनमंदिर बनावाया है । नलिनीगुल्मविमान यानि स्वर्गलोक का सर्वांग सुंदर विमान । मुंडारा गाम के शिल्पी दीपाजीने उसकी रचना की । वि.सं. 1446 में मंदिर का निर्माणकार्य शुरु हुआ था । पचास साल होते हुए भी पूर्ण हो सका नहीं था । लेकिन श्रेष्ठी धरणाशाह की वृद्धावस्था देखकर वि.सं. 1446 में इस गगनचुंबी मंदिर की प्रतिष्ठा पू.आ. सोमसुंदरसूरीश्वजजी म. के हस्ते हर्षोल्लासपूर्वक कराई गई । इस मंदिर के नीकट एक विराट नगरी का निर्माण हुआ, जिसका नाम राणकपुर रखा गया । वि.सं. 1499 में इस गाँवमें श्रावकों के तीन हजार घर विद्यमान थे । अकबर प्रतिबोधक पू.आ. श्री हीरविजयजी म. के सदुपदेश से यहाँ मेघनाद मंडप बनाने का और जीर्णोद्धार करने का उल्लेख मिलता है । राजस्थान के गोडवाल पंचतीर्थों के इस मुख्य तीर्थ का श्री आणंदजी कल्याणजी की पीढ़ीने जीर्णोद्धार कराके वि.सं. 2009 में पुन: प्रतिष्ठा कराई । 84 देवकुलिकाएँ, 1444 स्तंभ, सुंदर तोरण, चार मेघनाद मंडप, पाँच मेरु, 32 तोरण, सहस्रकूट, अष्टापद, चार रंगमंडप, नव भूमिग्रह और 38 हजार प्रतिमाओंसे विभूषित इस महामंदिर को त्रैलोक्य दीपक-प्रासाद या त्रिभुवन विहार के नामसे पहचाना जाता हैं । शासनसम्राट आ. श्री विजयनेमिसूरीश्वरजी म. की अत्यंत भाववाही प्रेरणा के परिणाम स्वरूप शेठ आणंदजी कल्याणजी की पीढ़ीने सतत 11 साल तक यहाँ के जीर्णोद्धार का काम करके इस तीर्थ को जगविख्यात किया ।

श्री जेसलमेर तीर्थ (श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ भगवान)

राजस्थान के मुख्य शहर जोधपुर से 140 मिल दूर बसे हुए जेसलमेर गाँव के पास टेकरी पर के किल्ले में यह तीर्थ बसा हुआ है । यहाँ मूलनायक श्री चिंतामणी पार्श्वनाथ भगवान की श्वेत वर्ण की लगभग 105 से.मी. ऊँची पद्मास्थ प्रतिमा है । एक समय में जैनों की जाहोजलालीवाले इस नगरमें 27 जैन श्रावकों के परिवार रहते थे । जेसलमेरमें जैन शिल्पकला का अद्‌भूत सौंदर्य देखने को मिलता है ।

उसके प्रत्येक मंदिर के तोरण, पूतलियाँ, स्तंभ आदिमें पश्चिम राजस्थान की शिल्पकलाकी उत्कृष्टता देखने मिलती है । शिल्पिीओंने किसी भी पथ्थर पर कहीं भी जरासी ऐसी जगह छोड़ी नहीं है कि वहाँ कोई भी कला के दर्शन न हों ! यहाँ का पीला पथ्थर भी अत्यंत कठिन होने से इसमें कारीगरी करना कोई छोटी बात नहीं है । समग्र देशमें जेसलमेर जैसा एक भी स्थान नहीं है कि जहाँ मंदिर ही नहीं, बल्की घरकी छज्जा, और झरुखेमें भी सूक्ष्म कारीगरी देखने मिलती है । यहाँ करीब 7000 जिनप्रतिमाएँ हैं । दुर्लभ ताडपत्रीय ग्रंथवाले 7 ज्ञानभंडार है । 18 उपाश्रय है । श्री चिंतामणी पार्श्वनाथ की भव्य प्रतिमा दर्शनीय है । उसके प्रवेशद्वार पर सैंकडों कलाकृतिवाले दो आकर्षक स्तंभ पर आकर्षक तोरण है । गर्भगृह, गूढमंडप, सभामंडप और भमति में 51 देवकुलिका की शृंगार चोकी है । गर्भगृहमें मूलनायक भगवान की लेपमय मूर्ति है । 14वीं सदीसे भी पहले की अनन्य भव्य प्रतिमाएँ और कलात्मक मंदिर चित्तको आकर्षित करते हैं । वि. सं. 1236 के फागुन की 2 के दिन लोद्रवा के पतन के कारण मूलनायक भगवान की प्रतिमा यहाँ लाकर बिराजमान की गई है । यहाँ वि.सं. 1459 और वि.सं. 1473 में प्रतिष्ठा हुई थी ऐसा उललेख मिलता है ।

श्री जीरावला तीर्थ (श्री जीरावला पार्श्वनाथ भगवान)

आबु रोड से 58 कि.मी. दूर बसा हुआ श्री जीरावला तीर्थ पर्वतमालाकी जीरापल्ली नामक पहाड़ की गोदमें है । यह बावन जिनालय मंदिर का दृश्य भावपूर्ण है । यहाँ मूलनायक श्री जीरावला पार्श्वनाथ भगवान की श्वेतवर्ण की करीब 18 c.m. इंची पद्मासनस्थ प्रतिमा है । जैन शास्त्रों में इस नगर का उल्लेख जीरावल्ली, जीरापल्ली, जुरिकावल्ली और जयराजपल्ली जैसे नामों से मिलता है । यह मंदिर वि.सं. 326 में कोडी नगर के शेठ श्री अमराशाने बनाया था । अमराशा को पार्श्वनाथ भगवान के अधिष्ठायक देव के दर्शन हुए और भूगर्भ में रही हुई पार्श्वप्रभु की प्रतिमा का संकेत दिया । आचार्य श्री देवसूरीश्वरजी म. को भी ऐसा ही स्वप्न आया था । आचार्यश्री और अमराशाने सांकेतिक स्थान पर खोज करके पार्श्वप्रभु की प्रतिमा प्राप्त की । अधिष्ठायक देवों के आदेशानुसार वहाँ मंदिर का निर्माण किया गया और वि.सं. 331 में आ. श्री देवसूरीश्वरजी म. के हस्त से

उसकी प्रतिष्ठा संपन्न हुई । उसके बाद अनेक प्रतिष्ठाएँ की गई । अंतिम प्रतिष्ठा वि.सं. 2020 के वैशाखी सुदी में श्री त्रिलोकवियजी के हस्त से संपन्न हुई । यहाँ मिलते शिलालेखों, आचार्य भगवंतो रचित स्तोत्रों और चैत्यपरिपाटी में जीरावला पार्श्वनाथ भगवान का नाम वि.सं. 1891 तक आता है, लेकिन इसके बाद उसका इतिहास मिलता नहीं है । उसका एक कारण मुसलमानों का आक्रमण भी गीना जा सकता है । जैन शास्त्रों में श्री जीरावला पार्श्वनाथ भगवान के 108 नाम की प्रतिमाएँ विभिन्न बावन देरियों में स्थापित है । अनेक आचार्य भगवंत और संघ यहाँ आ चूके हैं । इस नगरमें जीरावल गच्छ की स्थापना हुई हैं ।

श्री नाकोडा तीर्थ (श्री नाकोडा पार्श्वनाथ भगवान)

यह पवित्र तीर्थधाम बालोतरा रेल्वे-स्टेशनसे 10 कि.मी. दूर और मेवाड नगर से 1 कि.मी. दूर जंगल में पर्वतों के बीच बसा है । अत्यंत रमणीय प्राकृतिक वातावरणवाले इस तीर्थ में मूलनायक श्री पार्श्वनाथ भगवान की श्याम वर्ण की 58 से.मी. ऊँची पद्मासनस्थ प्रतिमा है । पार्श्वप्रभु की यह प्राचीन प्रतिमा अत्यंत मनोरम और चमत्कारीक है । यहाँ के अधिष्ठायक देव श्री भैरवजी महाराज के चमत्कार भी सर्वत्र विख्यात है । नाकोड़ा का प्राचीन नाम वीरमपुर होने का उल्लेख मिलता है । ऐसा कहा जाता है कि विक्रम की पूर्व तीसरी सदी में श्री वीरसेन और श्री नाकोरसेन नामक दो भाइयोंने वीस माईल के अंतरपे वीरमपुर और नाकोर नगर नामक गाँव बसाये । और इसमें अनुक्रम से श्री चंद्रप्रभु भगवान और श्री सुपार्श्व भगवान के मंदिर का निर्माण किया । प.पू.आ. श्री स्थूलिभद्र स्वामिजी के सुहस्त से उसकी प्रतिष्ठा करवाई और यही इस तीर्थ की एक विशेषता गीनी जाती हैं । समर्थ आचार्य और राजवीओंने बारबार इस तीर्थ की यात्रा की और जरूरत पर उसका जीर्णोद्धार करवाया ऐसा उल्लेख मिलता है । इसके बाद मुसलमानों के आक्रमणों के कारण इस मंदिर को ज्यादा क्षति हुई । वि.सं. 1428 में उसकी फिरसे प्रतिष्ठा की गई । वि.सं. 1511 के जीर्णोद्धारके समयमें प्रगट, प्रभावी, अधिष्ठायक देव श्री भैरवजी की स्थापना की गई । वि.सं. 1564 वि.सं. 1638 इस तीर्थ की जीर्णोद्धार की विगत मिलती है । उसके बाद बारबार आवश्यक जीर्णोद्धार होते रहे, इस मंदिर में । इसी क्षेत्र में करीब 16वी - 17 वी सदी के श्री आदिश्वर भगवान और श्री शांतिनाथ भगवान के मंदिर भी आये हैं ।

9. शांत सुधारस (अन्यत्वादि भावना)

5. अन्यत्व भावना

"परायी व्यक्ति घरमें आकर तोड़फोड़ करती हैं ।" कहावत तद्दन गलत नहीं.... ज्ञानसे समृद्ध ऐसे आत्मामें कर्मों के परमाणुओंने कैसे दुःखों को आमंत्रित किया है ? 1

अरे मेरे आत्मन् !

किसलिए दूसरों की कुथलीओमें रचीत रहकर पीड़ा मोल लेता है ? किसलिए तूं अपने पास रहे गुणों के भंडार की ओर नज़र नहीं करता ? उसका विचार भी क्यों नहीं करता ?

तू जिसके लिए प्रयत्न करता है, तू जिसके लिए भयका अनुभव करता है । कभी तू खुश होता है, कभी तू उदासी और कभी नाराजगी के चक्कर में आ जाता है; तेरा मनपसंद मिलने से हर्षसे पुलकीत हो जाता है, तेरे निर्मल आत्मस्वभाव को खुद चलकर तू जिस चीज के पीछे पागल हो रहा है, ये सब पराया है... तेरा कुछ नहीं है ।।3 ।। इस विश्व में दारुण दुःख और कौनसी पीड़ा-विटंबणा तुने सहन नहीं की है ? पशु और नरक गति में तुने मार खाया है; बार-बार तेरी कतल हुई है, तेरे टूकडे-टूकडे हुए हैं, ये सब पराये पदार्थों की आसक्ति का विलास है, ये सब भूलकर परभवमें पागल बनने की खेवना रखता है, खेवना की भी हद है ।।4 ।।

"ज्ञान-र्दशन-चरित्र के चिह्नोंसे युक्त चेतना के अलावा तमाम पदार्थ बेजान है । अन्य है ।" तू ऐसी सोच स्थिर करके अपने हित-कल्याण के लिए प्रयत्नशील बन ।।5 ।।

ओ विनय ! तेरे अपने घरकी अच्छी तरह संभाल ले ! शरीर... धन... स्वजन.... परिवार ये सभी में से कौन तुझे दुर्गति में जाने से रोक सकता है ? कोई तेरा अपना है ? ।।1 ।।

जिसको अपना समझकर स्वरूप धारण करता है.... वो शरीर भी अति चंचल है.... तुझे खिन्न बनाकर....शिथिल बनाकर.... छोड़ देगा ।।2 ।।

प्रत्येक जन्म में विविध प्रकार के परिग्रह इकठ्ठे किये है । कुटुम्ब-परिवार बनाता है और जब परभवमें जाना पड़ता है तब नन्हासा हिस्सा भी तेरे साथ आ नहीं सकता ।।2।।

आसक्ति और आवेश को जन्म देनेवाली ममता को छोड़ दे... इसके लिए अन्य चीजों का परिचय छोड़ दे... नि:संग और-निराकांक्ष बनकर अनुभव-रस के सुखको प्राप्त कर ! ।।4 ।।

सफर में मिलते अलग-अलग यात्रियों के साथ स्नेह का नाता बनाने से क्या फायदा ? अपने अपने कर्मों के सहारे जीते स्वजनों के साथ किसलिए स्नेह का संबंध रखता है ? ।।5 ।।

जिसको तेरी ओर प्रेम नहीं है उसको प्राप्त करने की कोशिश करेगा तो बेसुमार वेदना तुझे लपेट लेगी । पुद्गल की मायाजाल ऐसी ही प्रेमविहिन है । तू नाहक इसके पीछे पागल बनकर पीड़ा सहन करता है ! ।।6 ।।

जो जुदाई तक जानेवाला है, वह मिलन को पहले से ही छोड देता है... तेरी एकाग्रता को स्वच्छ और पारदर्शी बना दे । झांझवा के जल को होठ से स्पर्श कराने से तृषा नहीं छीपती । लेकिन ज्यादा भड़केगी ! ।।7 ।।

जगतमें जिसका कोई नहीं, उसको भी सहाय करनेवाले जिनेश्वर का ध्यान धरना चाहिए । यही एक मोक्ष प्राप्ति का-मुक्ति का सरल उपाय है । आधि-व्याधि को शांत करनेवाले.... और अच्छी रीत से पचानेवाले शांत-सुधा के रस का तू पान कर ! ।।8 ।।

6. अशुचि भावना

छिद्रयुक्त घड़े में से मदिरा गलति है और ऐसे अपवित्र घड़े को बाहरसे सुंदर मिट्टी से माँजी जाय, गंगा के पवित्र नीर से धोया जाय तो भी वह पवित्र नहीं बन सकता ! इसी तरह खराब हड्डियाँ, मल-मूत्र, श्लेष्म, चमड़ी और लहू से किलबिलाता यह शरीर शुद्ध नहीं होता ।।1 ।।

अबुध मनुष्य बार बार स्नान करके शरीर को स्वच्छ करता है । चंदन-सुखड़ का विलेपन करके अपनी जात को स्वच्छ मानता है, लेकिन यह भ्रमणा है । धूरा(कचराभरा) को शुद्ध नहीं कर सकते ! (शुद्ध हो तो धूरा न रहे) ।।2 ।।

लसून को कपूर आदि सुगंधित पदार्थों के साथ रखा जाय तो भी उसकी खराब बदबू जाती नहीं है । नगुनी व्यक्ति पर जीवनभर उपकार करो तो भी उसको दो आँखकी शर्म नहीं होती । ठीक इसी तरह मनुष्य का देह उसकी स्वाभाविक दुर्गंध को छोड़ता नहीं है । चाहे कितना भी समजाओ, सजाओ, हृष्ट-पृष्ट बनाओ लेकिन उसका भरोसा नहीं ।।3।।

जो शरीर अपने संपर्कमें आती पवित्र चीजों को भी मलिन बना देता है, इसमें पवित्रता की कल्पना करना यही बड़ा अज्ञान है; खेवना है । यह दैहिक स्वच्छता, पवित्रताकी धारणा ही गलत है... सभी दोषों का प्रक्षालन करनेवाला 'धर्म' ही विश्व में पवित्रतम है । इस धर्म को हृदयमें धारण कर ! ।।4-5 ।।

ओ विनय,

यह शरीर गंदा हे, मलिन है ! यह बात तू अच्छी तरह समझ । तेरे मन-कमल को विकसित कर ! और जो आत्म-तत्त्वरुप परमात्मा है, जो कल्याणकारी है, प्रकृष्ट विवेक से युक्त है, इसका तू चिंतन कर ! ।।1 ।।

स्त्री-पुरुष के रज और वीर्य के चकरावे में पड़े हुए मल और कचरे के समुहरूप शरीर में क्या अच्छा होगा ? उसको अच्छी तरह ढँक दो तो भी खराब पदार्थ गलते रहते हैं । ऐसे गंदे कूएँको कौनसा समझदार आदमी अच्छा मानेगा ? ।। 2 ।।

मुँहमें से अच्छी खुश्बु आये इसलिए पानमें बरास आदि सुगंधित पदार्थ डालकर खाते हैं फिर भी मुँह तो दुर्गन्धयुक्त लारसे भरा है । इसमें कब तक खुश्बेदार श्वास रहेगी ? ।।3 ।।

शरीर में व्याप्त गंदी खुश्बुवाला वायु दबाने से दबता नहीं है, ढँकने से ढँकता नहीं है, तो भी तू इस शरीर को बार बार सूँघता है, चाटता है, इस तरह तू शरीर को पवित्र बनाने की चेष्टा करता रहता है । इस पर प्रबुद्ध मनुष्य हँस रहा है ।।4 ।।

स्त्रीयों के शरीर के बारह और पुरुषों के शरीर नव छिद्रोंमें से सतत अशुचि पदार्थ नीकलता है और तू खूद को पवित्र मानने का बावलापन करता है ? मुजे लगता है यह कोई तेरा नया नयापनवाला अभिगम है ! ।।5 ।।

अच्छी रीतसे तैयार किया गया स्वादिष्ट और सुंदर भोजन भी विष्टा बनकर जुगुप्सा पैदा करता है । गाय का दूध पीने के बाद भी ये मूत्र बनकर गंदगी फैलाता है ।।6 ।।

यह शरीर केवल मल से भरे हुए परमाणु का ढ़ग है । सुंदर, सरस भोजन या मनोहर वस्त्र को भी यह शरीर अपवित्र बनाता है । लेकिन इसी शरीर में अगर कोई अच्छापन कुछ है तो वह उसका मोक्षमार्ग की आराधना करने का सामर्थ्य है । उस बारे में तू सोच !

इसी शरीर को महापुण्यशाली गीना जाय ऐसी कला के बारे में सोच । महापवित्र आगम शास्त्रोंरुपी जलाशय के तीर पर बैठ़कर तू शांत सुधा के रसका आस्वादन कर । तेरा शरीर तो ठीक मन भी पवित्र बन जायेगा ! ।।8 ।।

7. आश्रव भावना

जिस तरह चारों ओर से दौड़ते झरणें तालाब को पानीसे छलका देते हैं, उसी तरह यह संसार प्राणीयों के अलगअलग पाप-आश्रवसे छलकता है, आकुल-व्याकुल बनता है, अस्थिर और गंदा बनता है ।।1 ।।

थोड़ी-सी मेहनत करके, जल्द जल्द थोड़े कर्मों को हम जहाँ दूर करते हैं, वहाँ तो आश्रवरूपी शत्रु हमला करके प्रतिक्षण कर्मों से आत्मा को भर देता है ! ये कैसी विटंबणा है ? मुझे किस तरह उनको रोकना है ? मुझे इस भयंकर संसारसे किस तरह मुक्ति पानी है ? ।।2 ।।

महामनीषी पुरुषोंने मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, योग नामक चार आश्रव बतायें हैं । इन आश्रवसे पलपल प्राणी कर्मों के दलदल में फँसता है और संसार-चक्रमें भटकता रहता है ।।3 ।।

ये आश्रव पेदा होते हैं पाँच इन्द्रियों, पाँच प्रकार के अव्रत, चार जात के कषाय और तीन प्रकार के योगमें से ! उसके साथ पच्चीस (25) असत् क्रिया के मिलने से उसके बयालिस (42) प्रकार हो जाते हैं ।।4।।

इस तरह आश्रव तत्त्वों का जानकर और शास्त्राभ्यास से तत्त्वों का निर्णय करके आत्मन् ! तू इनका सर्वांगीण निरोध के लिए तमाम शक्ति (ताकत) लगाकर प्रयत्नशील बन ।।5 ।।

श्रेयार्थी जीवोंने हृदयमें समत्व को धारण करके कर्मबंध के लिए प्रबल कारणरूप आश्रवों को छोड़ना चाहिए । ये आश्रव जो निरंकुश बन गए... तो गुणों के वैभव को चारों ओर बीछा देंगे ।।1 ।।

मिथ्यात्वी दंभी गुरुओं के बहकावे में आकर अपनी गलत बुद्धि का शिकार बनकर चंचल जीव मोक्ष का सच्चा रास्ता छोड़कर अशुद्ध और अशुभ क्रियाओंमें फँस जाता है । इस तरह मोक्षसे ज्यादा से ज्यादा दूर होते जाता हैं ।

अविरति, त्याग, प्रतिज्ञा या अनुशासन के लिए जिसे कोई तमा ही नहीं, ऐसे प्राणी आवेगों के परवश बनकर इस लोक और परलोकमें कर्म के कारण उत्पन्न हुए भीषण दु:खों का शिकार बन जाते हैं ।। 3 ।।

इन्द्रिय-हाथी, मछली, भ्रमर, पतंगा और हिरन-ये प्राणी अपने अपने पसंदिता पदार्थों के पीछे पागल बनकर पीड़ा भुगतते हैं । और अंतमें मौत के पंजेमें जकडों जाते हैं ।। 4 ।।

कषाय-आवेश और आवेग के शिकार बने हुए प्राणी नरक की यात्रा करने पहुँच जाते हैं और अनंत अनंत जन्ममरण की घटमाल में भटकते रहते हैं ।। 5 ।।

योग-योग यानि की मन, बानी और वर्तन से चंचल प्राणी पाप के बोज से दोहरा झूक जाते हैं और कर्मरूपी कीचड़ के दलदलमें लपेट जाता हैं । इसलिए दूसरे सभी कार्यों को गौण करके हे आत्मन् ! तू आश्रवों पर विजय प्राप्त कर !

संयमी और विशुद्ध आत्माओं का शुद्ध-शुभ योग भी अच्छे कर्मों के एकत्र करता हैं । अंतमें तो मोक्ष के लिए ये शुभ कार्य भी सोने की जंजीर बनकर बाधक बनते हैं ।

हे विनय ! आश्रवरूपी पापों को रोकने के लिए तेरी बुद्धि का इस्तमाल कर और साथ साथ बीना थकान से शांत सुधारस का पान किया कर !।। 8।।

8. संवर भावना

जिन जिन उपायों द्वारा आश्रव को रोका जा सकता है, उन सभी की आंतरदृष्टिसे समालोचना-विचारणा करके तू इन उपायों का आदर कर और उसका अमल कर ।। 1 ।।

इन्द्रियाँ विषय और असंयम के आवेगों को संयम से दबा दे । सम्यकत्व से मिथ्यात्व को-जूठे आग्रह को अवरोध दें । आर्त और रौद्र ध्यान को स्थिरचित्त से रोक ले ।

क्षमा से क्रोध को, नम्रता से मानको, पारदर्शी सरलता से माया को और संतोष के बंध से सागर जैसे विशाल लोभ को निग्रहित कर ।। 3 ।।

मन, वचन, काया के दुर्जय ऐसे अशुभ योगों को तीन गुप्तिओं से शीघ्र जीतकर तू सुंदर संवर पंथ में भ्रमण कर । इससे तुझे इच्छित मुक्तिसुख मिलेगा ।।4 ।।

इस तरह स्वच्छ हृदय से आश्रवों के द्वारों को बंद करके स्थिर बना हुए जीवात्मारूपी जहाज प्राज्ञपुरुषों के वचनो में श्रद्धारूप झलक रहे पालसे सज्ज बनकर, शुद्ध योगरूप हवा के सहारे, तैरकर निर्वाणपुरी(मोक्ष) तक पहुँच जाता है ।

चेतन,

तू शिवसुख के साधनरूप सदुपायो.... सुंदर उपायों को सुन । ज्ञान, दर्शन, चारित्र की उत्कृष्ट, आराधनारूप ये उपाय अवश्यमेव फल देनेवाले है और तू उसे ध्यान से सून ।।1 ।।

विषयों के विकारों को दूर कर । क्रोध, मान, माया और लोभरूपी शत्रुओं पर आसानी से विजय प्राप्त करके, कषाययुक्त बनकर जल्द से संयमगुण की आराधना कर ।।2 ।।

क्रोधरूपी आगको बुझाने के लिए बादल जैसे उपशम भाव का तू बारबार चिंतन कर । वैराग्यकी उत्कृष्ट दशा को पहचानने का प्रयत्न कर ।।3 ।।

विकल्पों के जाले को जलाकर आर्त-रौद्र ध्यान को नष्ट कर दें । तत्त्व के अर्थीओं के लिए मानसिक विकल्पों को खोलनेवाली राह योग्य नहीं है । उससे तु दूर रहना ।

जागृततासभर मानसिक शुद्धि के साथवाला संयम योगों से तू तेरे शरीर को सार्थक कर । विश्व तो मत-मतांतर और मान्यताओं का गाढ़ जंगल जैसा है । इसमें तू अपना शुद्ध मार्ग निश्चित कर ।।5 ।।

पवित्र निर्मल ब्रह्मचर्य व्रत को सहज रीत से तू धारण कर । गुणों के समुद्ररुप गुरुदेव के श्रीमुख से नीकलते वचनों को तू अच्छी तरह से ग्रहण कर ।।6 ।।

संयम और शास्त्ररूप फलों से तू तेरा मन-परिणाम को महकता रख । ज्ञान, चारित्र आदि गुणों के पर्यायरूप चेतन को (आत्मस्वरूपको) अच्छी तरह पहचान ले ।

जिनेश्वरों के जीवन-कवनको गा-गाकर तेरे मुखको अलंकृत कर तेरी जिह्वा को पवित्र कर । विनय साथ शांतरस का बारबार पान करके दीर्घ समय पर्यंत आनंद को प्राप्त कर ।।8 ।। ●

10. प्रश्नोत्तरी

स. 1 पूजा के मुख्य कितने भेद है ? और कौन कौन से ?

उ. पूजा के दो भेद हैं - 1 द्रव्यपूजा 2 भावपूजा ।

स. 2 द्रव्यपूजा और भावपूजा यानि क्या ?

उ. द्रव्यपूजा यानि जल, चंदन, पुष्पादि सामग्री से प्रभु की पूजा करना । और भावपूजा यानि चैत्यवंदन तथा प्रभु के गुण-गान आदि करना ।

स. 3 द्रव्यपूजा कितने प्रकार की है ?

उ. द्रव्यपूजा पाँच, आठ, सत्तर, एकवीस और एकसौ आठ प्रकार की है ।

स. 4 भावपूजा कितने प्रकार की है ?

उ. चैत्यवंदन करना, स्तुति बोलना, गीत, नृत्य, भावना आदि की भावना करना (पाँच प्रकारकी) ।

स. 5 अष्टप्रकारी पूजा के नाम दीजीये ?

उ. 1. जलपूजा, 2. चंदनपूजा, 3. पुष्पपूजा, 4. धूपपूजा, 5. दीपकपूजा, 6. अक्षतपूजा, 7. नैवेद्यपूजा, 8. फलपूजा ।

स. 6 द्रव्यपूजा के मुख्य कितने भेद है ? और कौन-कौन से ?

उ. दो भेद है - अंगपूजा, अग्रपूजा ।

स. 7 अंगपूजा यानि क्या ? और कौन कौनसी पूजा अंगपूजामें गिनि जाती है ?

उ. अंगपूजा यानि शुद्ध चीजों से प्रभु के शरीर पे पूजा हो । पहली तीन-(10 जलपूजा (2) चंदनपूजा (3) पुष्पूजा अंगपूजा में गिनि जाती है ।

स. 8 अग्रपूजा यानि क्या ? कौन कौनसी पूजा अग्रपूजा में गिनि जाती है ?

उ. अग्रपूजामें यानि प्रभु के सामने रहकर जो पूजा हो । अंतिम पाँच पूजा अग्रपूजा गिनि जाती है - धूपपूजा, दीपकपूजा, अक्षतपूजा, फलपूजा ।

स. 9 पंचामृत यानि क्या ?

उ. दूध, दहीं, घी, साकर और पानी ।

स. 10 जलपूजा यानि क्या ?

उ. जलपूजा यानि प्रथम पंचामृत से प्रभु को अभिषेक करके बादमें पानी से प्रक्षाल करना ।

स. 11 चंदनपूजा यानि क्या ?

उ. चंदनपूजा यानि कैसर, चंदन, बरास, कस्तुरी आदि से प्रभु की पूजा करना ।

स. 12 पुष्पपूजा यानि क्या ?

उ. पुष्पपूजा यानि सुवासित-रंगबिरंगी और भाँति-भाँति के उत्तम फूल प्रभु को चढ़ाना ।

स. 13 धूपपूजा यानि क्या ?

उ. धूपपूजा यानि प्रभु के सामने खड़े रहकर दशांग, कपूर, अगरबत्ती, चंदन आदि का धूप करना ।

स. 14 दीपकपूजा यानि क्या ?

उ. प्रभु के सामने खड़े रहकर आरती-मंगलदीप उतारना या प्रभु के आगे दीपक धरना ।

स. 15 अक्षतपूजा यानि क्या ?

उ. अक्षतपूजा यानि प्रभु के सामने अक्षत(चावल) से साथिया करना ।

स. 16 नैवेद्य पूजा यानि क्या ?

उ. नैवेद्य पूजा यानि साथिये पर पतासा, साकर, पेंडा, बरफी आदि रखना ।

स. 17 फलपूजा यानि क्या ?

उ. फलपूजा यानि सिद्धशिला पर श्रीफल, बादाम, सुपारी, नारंगी, मौसंबी, आम, केले, जामफल आदि रखना ।

स. 18 देवगति और मनुष्यगति में कौन जाता हैं ?

उ. जो जीव दान, शील, तप, भावना, जिनपूजा, सामयिक आदि उत्तम कार्य करते हैं वे ।

स. 19 तिर्यंचगति में कौन जाता है ?

उ. हृदयमें आँट-साँट रखनेवाले, ठगाई करनेवाले प्रपंची शल्यवाले आदि तिर्यंचगतिमें जाते हैं ।

स. 20 नरकगति में कौन जाये ?

उ. जो मनुष्य या तिर्यंच बहोत सारे भयंकर पाप करें वह नरक में जाता हैं । जैसे कि पंचेन्द्रिय प्राणी का वध करें, मांसाहार करें ।

स. 21 श्री जिनेश्वर भगवानने धर्म के कितने प्रकार दीखाये हैं ?

उ. श्री जिनेश्वर भगावनने धर्म दो प्रकार से दीखाये है- साधुधर्म, श्रावकधर्म ।

स. 22 प्रभु के दर्शन करने से क्या लाभ होता है ?

उ. प्रभु 18 दूषणों से रहित और सर्व गुणों से संपन्न हैं, इसलिए उनके दर्शन करने से अपना आत्मा उनके प्रति झूकता है, दोष जाते हैं और गुण प्रगट होते हैं । संक्षिप्तमें प्रभु के दर्शन करने से प्रभु जैसे गुण आते हैं और दोष जाते हैं ।

स. 23 कल्याणक यानि क्या ? उसके नाम लिखो ।

उ. कल्याणक यानि कल्याण करनेवाले दिन अर्थात् जिन दिनों में तीर्थंकर परमात्मा देवगतिमें से या नरकगतिमें से च्यवकर माता की कुक्षिमें आए, जन्म पामें, दीक्षा ग्रहण करें, कैवल्यज्ञान प्राप्त करें और मोक्ष में जाये - ये पवित्र दिन ! च्यवन, जन्म, दीक्षा, कैवल्यज्ञान और मोक्ष । ये पाँच कल्याणक हैं ।

स. 24 श्री महावीर प्रभु के पाँच कल्याणक कब-कब हुए ?

उ.
च्यवन कल्याणक-	अषाढ़ी सुदी-6
जन्म कल्याणक-	चैत्र सुदी-13
दीक्षा कल्याणक -	कार्तिक वदी-10
कैवल्य कल्याणक -	वैशाख सुदी-10
मोक्ष कल्याणक-	आसो वद ०))

स. 25 तेसठ शलाका पुरुष कौन-कौन हैं ?

उ. 23 तीर्थंकर, 9 वासुदेव, 9 बलदेव, 12 चक्रवर्ती, 9 प्रतिवासुदव ।

स. 26 ज्यादा से ज्यादा और कम से कम तीर्थंकर, कैवल्यज्ञानी और साधु कितनी संख्यामें विचरते हैं ?

उ. ज्यादा से ज्यादा तीर्थंकरो 170, कैवल्य ज्ञानीगण 9 क्रोड, और साधु 9 हजार क्रोड (90 अबज) विचरते हैं । कम से कम तीर्थंकर 20, कैवल्य ज्ञानी 2 क्रोड और साधुओ दो हजार क्रोड (20 अबज) विचरते हैं ।

स. 27 तीनों लोगमें शाश्वते जिनमंदिर कितने हैं ?

उ. 8,57,00,282 (आठ क्रोड, सत्तावन लाख, दोसो ब्यासी)

स. 28 तीन लोकमें शाश्वती प्रतिमा कितनी हैं ?

उ. 15,42,58,36,080 (पंद्रह अबज, बयालीस क्रोड, अठ्ठावन लाख, छत्तीस हजार, अस्सी) ।

स. 29 थोय-जोड़े की हरेक गाथा में किस-किस की स्तुति होती है ?

उ. पहली गाथामें जो मुख्य भगवान की थोय होती है उसी भगवान की, दूसरी गाथामें सर्व श्री जिनेश्वर भगवान की, तीसरी गाथा में ज्ञान की और चौथी गाथा में शासन के अधिष्ठायक देव-देवीयों की स्तुति होती है ।

स. 30 महुपत्ति, चरवला, कटासणा यानि क्या ? और इनका नाप कितना होना चाहिए ?

उ. मुहपत्ति यानी बोलने के समयपे मुँह के आगे रखनेवाला कपड़ा । वह एक बैंत और चार अंगुलियाँका नाप की होनी चाहिए ।

चरवला यानि आने, जाने, बैठने, उठने-जीवरक्षा करने का साधन ! वह बत्तीस (32) अंगुलियों का होना चाहिए । इसमें दांडी चौबिस(24) अंगुलियों की और दशियाँ आठ अँगुलियों की होनी चाहिए ।

कटासणा यानि बैठने का गरम आसन । वह एक गंज (लंबाई का 24 तसु का नाप) का होना चाहिए ।

ये तीनों उपकरण जीवरक्षा के लिए रखे जाते हैं ।

स. 31 आशातना यानि क्या ? जिनमंदिर संबंधी वह कितनी है ? और कौन-कौन सी है ?

आशातना यानि लाभ के बदले नुकशान हो ऐसा अयोग्य वर्तन ।

जिनमंदिर संबंधी बड़ी आशातना 10 है । जैसे कि-

1. जिनमंदिर में तंबोल खाना, पान चबाते जिनमंदिर में जाना ।

2. जिनमंदिरमें पानी पीना । 3. जिनमंदिर में भोजन करना । 4. जिनमंदिर में जूत्ते पेहनना । 5. जिनमंदिर में मैथुन सेवना । (खराब वर्तन करना)। 6. जिनंमंदिर में सो जाना । 7. जिनमंदिर में थूँकना या उगाल डालना । 8. जिनमंदिर में पेशाब करना । 9. जिनमंदिर में दस्त करना । 10. जिनमंदिर में जुगार खेलना ।

स. 32 पूजा करनेवालेने कितने प्रकार की पवित्रता रखनी चाहिए ? कौनसी ?

उ. पूजा करनेवालेने सात प्रकार की पवित्रता रखनी चाहिए ।

1. शरीर पवित्र रखना । 2. वस्त्र स्वच्छ रखना । 3. मनमें प्रभु के गुण के विचार रखना । 4. मंदिर की और आसपास की जमीन साफ रखना । 5. पूजा की चीजें अच्छी और शुद्ध रखना । 6. पूजा की चीजें प्रामाणिकतासे उपार्जन किये गये पैसे से लाना । 7. प्रभुपूजा विधिनुसार करना ।

स. 33 परमेष्ठि यानि क्या ?

उ. परमेष्ठि यानि परम उच्च स्थानपे बिराजमान आत्मा ।

स. 34 अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु किसको कहें जाते हैं ?

उ. *अरिहंत - अरिहंत के तीन अर्थ हैं ।*

1. अरिहंत यानि चार धातिकर्म का नाश करके कैवल्यज्ञान प्राप्त करके भव्य जीवोंको उपदेश देनेवाले तीर्थंकर भगवान ।
2. 18 दोषोंसे रहित, 12 गुणोंसे युक्त, 34 अतिशय सहित और बानीके 35 गुणोंसे युक्त, तीर्थके स्थापक वे अरिहंत ।
3. अरि यानि शत्रु, हंत यानि नाश करनेवाले यानि कि राग, द्वेष आदि आंतरशत्रु का नाश करनेवाले ।

सिद्धि - सिद्ध यानि आठों कर्मों का क्षय करके मोक्षमें गये ।

आचार्य-आचार्य यानि गच्छके नायक आचार्य पदसे विभूषित हुअे हो ।

उपाध्याय-उपाध्याय यानि पढ़े और पढ़ाये उपाध्याय पदसे विभूषित हुअे हो ।

साधु-साधु यानि पाँच महाव्रत का पालन करें वे । कंचन-कामिनी के त्यागी ।

स. 35 श्री जिनेश्वर भगवान के सिवा अन्य देव-देवीयों को क्यों नहीं मानना चाहिये ?

उ. दूसरे देव-देवियाँ राग-द्वेषसे भरे हैं । और ऐसा उनकी मूर्तियाँ और चरित्र परसे मालूम पड़ता है । उनको माननेसे मिथ्यात्व दोष लगता है । इसलिए उनको नहीं मानना चाहिए ।

स. 36 श्री जिनेश्वर की पूजा क्यों करनी चाहिए ?

उ. उपसर्ग का नाश हो, दु:खों का छेदन हो और मन प्रसन्न हो इसलिए श्री जिनेश्वर की पूजा करनी चाहिए ।

स. 37 अष्टमंगल यानि क्या ? उनके नाम दो ।

उ. अष्टमंगल यानि आठ मांगलिक चीजें ।

1. साथिया, 2. श्रीवत्स, 3. कुंभ, 4. भद्रासन, 5. नंदावर्त, 6. मीनयुगल, 7. दर्पण, 8. वर्धमान।

स. 38 जिनमंदिर में प्रभुके पास कीस तरह के चैत्यवंदन, स्तवन, थोय कहे जाते हैं ?

उ. जिसमें प्रभु के गुणों का वर्णन हो और अपने आत्मा की निंदा की गई हो ।

स. 39 जैनधर्म के चारमंगलरूप कौन गिने जाते हैं ?

उ. 1. श्री वीरप्रभु, 2. गौतमस्वामी, 3. स्थूलभद्रजीVआदि शीलवान साधु, 4. जैन धर्म ।

स. 40 चैत्यवंदन, स्तुति किस तरह बोले जाते हैं ?

उ. अन्य को हरकत न पहुँचे, कंटाला न आये, इस तरह शांतिपूर्वक, उल्लाससे, मधुर स्वरसे बोले जाते हैं ।

स. 41 चैत्यवंदन यानि क्या ? और इसके कितने प्रकार हैं ?

उ. चैत्यवंदन यानि श्री जिनेश्वरदेव को विधिपूर्वक वंदन हो ऐसी क्रिया । इसके तीन प्रकार है -

1. जघन्य चैत्यवंदन - अरिहंत चेइआणं, अन्नत्थ० कहकर एक नवकार का काउसग्ग करके, नमोर्हत् कहकर करके थोय कहना ।

2. मध्यम चैत्यवंदन - तीन खमासमण देकर चैत्यवंदन, जंकिंची, नमुत्थुणं, जावंति चेइआइं, खमासमण, जावंतकेविसाहू, नमोर्हत्, स्तवन (उवसग्गहरं), जय वीयराय कहकर खड़े होकर अरिहंत चेइयाणं, अन्नत्थ कहकर एक नवकार का काउसग्ग करके, नमोऽर्हत् कह कर काउसग्ग पूर्ण करके थोय बोलना ।

3. उत्कृष्ट चैत्यवंदन-देववंदन करना ।

स. 42 प्रभुकी अष्टप्रकारी पूजा क्यों करनी चाहिए ?

उ. आठों कर्म का नाश करके मोक्ष जाने के लिए अष्टप्रकारी पूजा करनी

चाहिए ।

स. 43 श्रावक के व्रत कितने हैं ? कौन-कौन से ? उनके अर्थ भी समझाईये ।

उ. श्रावक के 12 व्रत हैं - वे इस प्रकार हैं -

1. स्थूल प्राणातिपात विरमण व्रत - यानि बिना अपराध वाले त्रस जीवको इरादापूर्वक मारना नहीं । और स्थावर जीवों की शक्य जयणा करना ।

2. स्थूल मृषावाद विरमण व्रत-यानि कन्या, गाय, भूमि संबंधि अर्थात् मानव, प्राणी, जर, जमीन आदि कोइ भी विषय संबंधमें जूठ़ बोलकर किसीको ठगना नहीं । पराई अमानत हड़प नहीं करना । और किसी भी विषय की बाबत की जूठ साक्षी भरना नहीं ।

3. स्थूल अदत्तादान विरमण व्रत-यानि किसि की अमानत रखी हो, कोई भी चीज पड़ी हो या भूली हुई हो या खो गई हो या छोड़ दी गई हो ऐसी पराई चीज मालिक की रजा बिना नहीं लेनी चाहिए ।

4. स्वदारा संतोष परस्त्रीगमन विरमण व्रत-यानि अपनी परणित स्त्री के सिवा जगत की तमाम स्त्रीयाँ को माता-बहन समान मानना वह ।

5. परिग्रह व्रत-यानि धन-धान्यादि नव प्रकार के परिग्रह मर्यादित प्रमाण में रखना और इसमें अधिक मूर्छा नहीं रखना ।

6. दिक्परिमाण व्रत यानि संसार-व्यवहार के काम के लिए हरेक दिशामें जरूरियात मुजब जाने की छूट रखना बाकी के क्षेत्रो में जाने का त्याग करना ।

7. भोगोपभोग परिमाण व्रत-यानि भोग और उपभोगमें लेनेवाली चीजों की मर्यादा तय करके बाकी का त्याग करना । इस व्रत से महा आरंभ और हिंसाजनक पाप-व्यापारों का त्याग होता है ।

8. अनर्थदंड विरमण व्रत-यानि जीवन जीने के लिए जरूरी न हो ऐसी निकम्मी दुष्ट प्रवृत्तियों का शक्य परित्याग करना, जैसेकि (1) गलत चिंतारूप आर्तरौद्र ध्यान (2) बिनसंबंधी के हिंसामय व्यापार आदि की सलाह (3) किसी भी माँगनेवाले को हिंसक उपकरण-छरी, शस्त्र, घंटी आदि देना । (4) खेल, जुगार आदि कुतूहल वश देखना । (5) कामक्रीडा

करना, (6) प्रमादाचरण करना आदि । ये सभी अशुभ प्रवृत्तियाँ का इस व्रतसे त्याग हो जाता है ।

9. सामायिक व्रत-यानि पापमय संसार की प्रवृत्तियोंमें से मुक्त होकर "बारबार सामायिक करना" या 48 मिनट तक मन-वचन-कायासे सर्व व्यापारों का त्याग करके धर्मध्यान यानि स्वाध्याय और ध्यानमें रहना ।

10. देशावगाशिक व्रत-यानि दिकपरिमाण और भोगोपभोग परिमाण व्रत में जो नियम-मर्यादाएँ रखी हो इसमें अति संकोच करके 'एक दिन के लिए' विशिष्ट आग्रह से 'दस सामायिक' करके और चौदह (14) नियम आदि करके देशावगासिक व्रत किया जाता है ।

11. पौषधोपवास व्रत-यानि पर्वतिथिपे आहार, शरीरसत्कार, गृहव्यापार तथा अब्रह्मचर्य के त्यागपूर्वक गुरुनिश्रा में धर्मपोषण हो इस तरह चार प्रहर या आठ प्रहर की धर्मप्रवृत्ति करना ।

12. अतिथिसंविभाग व्रत-यानि उपवास के पारणे के दिन एकासणा करके 'अतिथि' ऐसे मुनिवर को सूझता आहार वहोराकर, उन्हों ने जो चीजें ली हो इससे ही एकासणा का व्रत करना ।

ये व्रतो में पहले 1 से 5 अणुव्रत कहे जाते हैं । बाद के 6 से 8 व्रत को गुणव्रत कहे जाते हैं और अंतिम 9 से 12 व्रत को शिक्षाव्रत कहा जाता है ।

स. 44 अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत यानि क्या ?

उ. अणुव्रत यानि महाव्रत की अपेक्षा से छोटे व्रत । गुणव्रत यानि अणुव्रत को गुण करनेवाले व्रत और शिक्षाव्रत यानि बारबार करने योग्य व्रत । (संयमकी शिक्षा देनेवाले व्रत)

स. 45 पौषध यानि क्या ?

उ. पौषध यानि धर्म की पुष्टि हो वह या अधिक प्रमाणमें धर्म हो ऐसी श्री जिनेश्वर देवोंने बताई हुई धर्म क्रिया । (चार या आठ प्रहर पर्यंत की साधु भगवंत जैसे आचार के अभ्यासकी क्रिया ।

स. 46 पौषध के कितने प्रकार है ? कौन-कौन से ? उनके अर्थ समझाइये ।

उ. 1. आहार पौषध (उपवास, आयंबिल या एकासणा करके पौषध करना)

2. शरीर सत्कार पौषध-पौषध की वजह से शरीर को नहीं सजाना ।

3. अव्यापार पौषध-पापकार्यों का त्याग करना ।

4. ब्रह्मचर्य पौषध-शियल का पालन करना ।

स. 47 सम्यकत्व यानि क्या ?

उ. सुदेव, सुगुरु और सुधर्म प्रति संपूर्ण श्रद्धा रखना ।

स. 48 आगम यानि क्या ? और वे कितने हैं ?

उ. श्री तीर्थंकरदेवोंने अर्थरूप कहे हुए और श्री गणधर भगवंतोने सूत्ररूप गूँथे हुए वचन-वही आगम कहलाते हैं । वे 45 है ।

स. 49 45 आगम की संख्या बताओ ।

11 अंग, 12 उपांग, 10 पयन्ना, 6 छेदसूत्र, 4 मूलसूत्र, 1 नंदीसूत्र, 1 अनुयोगद्वार ।

स. 50 कितने वर्ष पहले आगम लिखे गये ? कहाँ लिखे गये और किसने लिखवाये ?

उ. भगवान श्री महावीरदेव मोक्ष सिधाये इसके 980 वर्ष बाद श्री देववर्द्धिगणि क्षमाश्रमण नामक महाराजने आगम वल्लभीपुरमें लिखवाये ।

स. 51 आगम के दूसरे नाम लिखो ।

उ. श्रुत-आगम, सिद्धान्त, प्रवचन, जिनागम और शास्त्र ।

स. 52 पंचांगी किसको कहते हैं ?

उ. 1. मूल-सूत्र, 2. निर्युक्ति, 3. भाष्य, 4. चूर्णि, 5. टीका या वृत्ति - ये पाँचो मिलकर पंचांगी कहलाते हैं ।

स. 53 द्वादशांगी यानि क्या ? उसे किसने बनाई ?

उ. बार अंग या श्री गणधरदेवों रचित बार महान सूत्र को द्वादशांगी कहते हैं । और वे भगवान श्री महावीरदेव के गणधर श्री गौतमस्वामीजीने बनाई है ।

स. 54 सूत्र यानि क्या ?

उ. सूत्र यानि संक्षिप्तमें, अधिक अर्थ बतानेवाले ग्रंथ और ये श्री गणधरदेव, चौद पूर्वी और प्रत्येक बुद्धने रचे हैं ।

स. 55 सूत्र उपरांत जैन आचार्योंने अन्य कौनसे ग्रंथ लिखे हैं ?

उ. जैनाचार्योंने न्याय, जैन तत्त्व, आचार, कथाएँ, वैराग्योपदेश और वादविवाद के ग्रंथ, इसके अलावा संस्कृत और प्राकृत भाषा के व्याकरण, कोष अलंकार और काव्य ईत्यादि विविध विषयों के उत्तम कोटिके ग्रंथ लिखे हैं ।

स. 56 कैवल्यज्ञानी और तीर्थंकरमें क्या फर्क है ?

उ. कैवल्यज्ञानी और तीर्थंकर दोनों ज्ञानादि-शक्तिमें समान है, लेकिन तीर्थंकर को तीर्थंकर नामकर्म का उदय होने से वे तीर्थ की स्थापना करते हैं । एवं आठ प्रतिहार्यो, बानी के पैंतीस गुण और चौतीस अतिशयो आदि वृद्धि उनको होती हैं ।

स. 57 वंदन करने से क्या लाभ होता है ?

उ. 1. विनय आता है । 2. अभिमान का नाश होता है । 3. श्री जिनेश्वरदेव की आज्ञा का पालन होता है । 4. धर्म की आराधना होती है । 5. वडीलजन की पूजा होती है । 6. मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

स. 58 मुद्रा यानि क्या ? वे कितनी है ? उनके नाम दो ।

उ. सूत्र बोलते समय हाथ, पग आदि अंगो की विशिष्ट रचना-उसे मुद्रा कहते हैं । वे तीन है-1. योगमुद्रा, 2. जिनमुद्रा, 3. मुक्ताशुक्ति मुद्रा ।

स. 59 योगमुद्रा, जिनमुद्रा और मुक्ताशुक्तिमुद्रा - ये हरेक कैसे होती हैं ? और इन मुद्राओंसे कौन-कौनसे सूत्र बोले जाते हैं ?

उ. 1. योगमुद्रा यानि दो हाथ के अंगूठे आमने-सामने रखकर बायें हाथ की अंगूलि अंतिम आये इस तरह परस्पर आंतरा में अँगूलियाँ बराबर मिलाकर, कमलके ड़ोड़े के आकार में दो हाथ रखकर पेट पर कोहनी रखना । इस मुद्रा से चैत्यवंदन, नमत्थुणं और स्तवनादि बोला जाता है । 2. जिनमुद्रा यानि पाँव के अगले भाग में चार अँगूलियों का और पीछे थोड़ा कम अंतर रखकर खड़े रहना । इस मुद्रा से काउस्सग्ग, वंदन आदि होते हैं । 3. मुक्ताशुक्ति यानि दो हाथ मोती की छीप की तरह पोले रखकर दोनों हाथों को जोड़कर कपाल से लगाना । इस मुद्रासे जावंति चेइआइं, जावंत केवि साहू और जय वीयराय 'आभवमखंडा' तक बोला जाता है ।

स. 60 जिनमंदिर में कौन सी चीज साथ में नहीं ले जा सकते ?

उ. 1. खाने-पीने की जो चीजें अपने उपयोग में लेने की हो वे चीजें 2. लकड़ी, छाता, जूते, चंपल, हथियार आदि ।

स. 61 प्रभु की जलपूजा किसलिए करनी चाहिए ?

उ. जैसे स्नान करने से शरीर परका मैल नष्ट हो जाता है और शरीर स्वच्छ होता है वैसे दीर्घ कालसे लगे पापों के समूह को नष्ट करनें आत्मा को पानी के जैसा निर्मल करने के लिए जलपूजा करनी चाहिए ।

स. 62 प्रभु की चंदनपूजा किसलिए करनी चाहिए ?

उ. जैसे चंदन का लेप करने से शरीर को ठंडक और शांति होती है, वैसे क्रोध, मान, माया, और लोभ-ये चार कषायोंसे सुलग रहे आत्माको शीतल करने के लिए और अखंड शांति प्राप्त करने के लिए चंदनपूजा करनी चाहिए ।

स. 63 प्रभु की फूलपूजा क्यों करनी चाहिए ?

उ. जैसे फूलकी सुगंध से मन प्रफुल्लित होता है वैसे -"हे प्रभु ! आपकी फूलपूजा से मेरा मन धर्म द्वारा सुवासित बनें ।" ऐसी भावना से फूलपूजा करनी चाहिए ।

स. 64 धूपपूजा क्यों करनी चाहिए ।

उ. जैसे धूप करने से दुर्गंध नष्ट होती है, वैसे आत्मा को दीर्घ काल से लगी मिथ्यात्व, ममता, मान, आदि कुवासना रूपी दुर्गंध दूर करने धूपपूजा करनी चाहिए ।

स. 65 दीपक पूजा क्यों करनी चाहिए ?

उ. जैसे दीपक अंधकार को दूर करके उजाला करता है, वैसे आत्मामें रहे हुए अज्ञान का नाश करके केवलज्ञानरुपी दीपक प्रगटाने के लिए दीपकपूजा करनी चाहिए ।

स. 66 अक्षतपूजा किस लिए करनी चाहिए ?

उ. नष्ट न हो सके ऐसे अखंड मोक्षसुख प्राप्त करने के लिए अक्षतपूजा करनी चाहिए ।

स. 67 नैवेद्यपूजा किसलिए करनी चाहिए ?

उ. भूख और तृषा को नष्ट करके आत्मा का अणाहारी स्वभाव प्रगट करने के लिए नैवेद्यपूजा करनी चाहिए ।

स. 68 फलपूजा किसलिए करनी चाहिए ?

उ. प्रभु को फल अर्पण करके उसके बदले में त्यागरूप सर्वोत्तम फल की अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति के लिए फलपूजा करनी चाहिए ।

स. 69 किसलिए जीवों के जन्ममरण के दु:ख नष्ट होते हैं ?

उ. सम्यग्ज्ञान, सम्याग्दर्शन और सम्यग्चारित्र की प्राप्ति से और उसकी निर्मल आराधना से जीवों के जन्म-मरण के दु:ख नष्ट होते हैं ।

स. 70 जीव की सद्गति किसलिए होती हैं ?

उ. राग-द्वेष न करना, अच्छे परिणाम रखना, धर्म की रुचि रखना, पापका भय रखना, आदि से सद्गति मिलती है ।

स. 71 जैनधर्म के मुख्य सिद्धांत कौनसे हैं ?

अनेकान्तवाद, नय, निक्षेप और सप्तभंगीसे तत्त्व का स्वरूप, कर्मसिद्धांत, क्षमा, मृदुता आदि दस प्रकार के धर्म सिद्धांत तथा (1) सभी जीवों पर दया रखना (2) सत्य बोलना (3) चोरी न करना (4) ब्रह्मचर्यका पालन (5) धन-धान्यादि पर मूर्छा न करना ।

स. 72 विगइ यानि क्या ? वह कितनी है ? इनके नाम दो ।

उ. विगइ यानि बुद्धि को बिगाड़कर आत्माको दुर्गति में धकेल दे उसको विगइ कहते हैं । वे 6 हैं-घी, दूध, दहीं, तेल, गुड़ और कडा विगइ (तली हुइ चीज)

स. 73 चौबिस (24) तीर्थंकर कहाँ कहाँ मोक्ष में गए ?

उ. श्री अष्टापद पर्वत पर श्री ऋषभदेव भगवान, श्री पावापुरीमें भगवान श्री महावीरस्वामी, श्री चंपापुरीमें श्री वासुपूज्यस्वामी भगवान, श्री गिरनार पर्वत पर श्री नेमिनाथ भगवान और बचे हुए वीस तीर्थंकरदेव श्री समेतशिखरजी पर मोक्ष गए ।

स. 74 किसलिए घंट बजाना चाहिए ?

उ. दर्शनपूजा करके जो आनंद हुआ है उसको जाहिर करने के लिए और 'तूँ ही मेरा नाथ है ?" ऐसा बताने के लिए घंट बजाना चाहिए ।

स. 75 सिद्ध भगवंत भी आठों कर्मों का नाश करके मोक्ष में गए हैं, तो भी अरिहंत भगवंतो को पहले नमस्कार क्यों किया जाता हैं ?

उ. सिद्ध भगवंतकी पहचान करानेवाले अरिहंत भगवंत हैं क्योंकि अरिहंत भगवंतो से ही सिद्ध भगवंतो की सच्ची पहचान होती है और भी अरिहंत भगवान स्व और पर अनेक का कल्याण करते हैं इसलिए श्री अरिहंत भगवंतों को पहले नमस्कार किये जाते हैं ?

स. 76 पंचप्रतिक्रमण के कौनसे सूत्र किस महापुरुषने रचे हैं ?

उ.

जगचिंतामणि	-श्री गौतमस्वामी महाराज
उवसग्गहरं	-श्री भद्रबाहुस्वामिजी महाराज
कल्याणमंदिर	-श्री सिद्धसेनदिवाकरसूरिजी महाराज
नमिउण	-श्री मानतुंगसूरिजी महाराज
भक्तामर	-श्री मानतुंगसूरिजी महाराज
संसारदावा	-श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज
सकलार्हत्	-श्री हेमचन्द्रसूरिजी महाराज
छोटी (लघु) शांति	-श्री मानदेवसूरिजी महाराज
स्नातस्या	-श्री बालचंद्रजी महाराज
संतिकर	-श्री मुनिसुंदरसूरिजी महाराज
अजितशान्ति	-श्री नंदिषेणसूरिजी महाराज
तिजयपहुत्त	-श्री मानदेवसूरिजी महाराज
बडी(गुरु) शांति	-श्री शिवादेवी माता (कई वादिवेताल श्री शांतिसूरिजी को गुरुशांति के कर्ता कहते हैं)
सकलतीर्थ	-श्री जीवविजयजी महाराज

और बाकी के सूत्र श्री गणधर भगवंतोने रचे हैं ।

स. 77 श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने कितने ग्रंथ रचे हैं ? और इन ग्रंथों के अंतमें कौनसा शब्द रखा गया है ?

उ. श्री हरिभद्रसूरिजी महाराजने 1444 ग्रंथ रचे हैं (कई 1440 या 1400 ग्रन्थ बतातें हैं) उनके ग्रंथके अंतमें 'भवविरह' याकिनी महत्तरासूनु शब्द रखा गया है ।

स. 78 पाँच स्तवना (दंडकसूत्र) के नाम लिखो और वे कौनसे सूत्र हैं ?

उ. 1. नामस्तव-लोगस्स

2. शक्रस्तव-नमुत्थुणं

3. चैत्यस्तव-अरिहंत-चेइआणं

4. श्रुतस्तव-पुक्खरवदी

5. सिद्धस्तव-सिद्धाणं-बुद्धाणं

स. 79 जीवयोनि यानि क्या ? और एकेन्द्रियादी जीवों की कितनी कितनी योनि होती है ?

उ. जीवयोनि यानि जीवका उत्पत्ति स्थान

एकेन्द्रिय -

पृथ्वीकाय की सात लाख, अपकाय की सात लाख, तेउकाय की सात लाख और वायुकाय की सात लाख योनि, प्रत्येक वनस्पतिकाय की दस लाख यानि ।

साधारण वनस्पतिकाय की चौद लाख योनि ।

विकलेन्द्रिय-

दोइन्द्रिय की दो लाख योनि, तेइन्द्रिय की दो लाख योनि, चउरिन्द्रिय की दो लाख योनि ।

पंचेन्द्रिय -

देवता की चार लाख योनि, नारकीकी चार लाख योनि, तिर्यंच-पंचेन्द्रिय की चार लाख योनि ।

इस तरह एकेन्द्रिय की 52 लाख, विकलेन्द्रिय की 6 लाख और पंचेन्द्रिय की 26 लाख-कुल मिलाकर 84 लाख योनि होती हैं ।

संदर्भग्रन्थ सूचि

- जैन धर्म परिचय (आ. श्री विजय भुवनभानुसूरिजी म.)
- पदार्थसंग्रह (आ. श्री विजय हेमचंद्रसूरिजी म.)
- जैन तीर्थ दर्शनावली (आ. श्री विजय चंद्रोदयसूरिजी म.)
- शांत सुधारस-भावानुवाद (आ. श्री विजय भद्रगुप्तसूरिजी म.)
- श्री राजनगर जैन पाठशाला-पाठयक्रम

શ્રી
મહાવીર જૈન
વિદ્યાલય
મુંબઈ
દર્શન
જ્ઞાન
ચારિત્ર
ઉપશમ
વિવેક
સંવર
પઢમં નાણં તઓ દયા